खण्ड - 'ख' (पद्य)

महाकविकालिदासप्रणीतम्

रघुवंश-महाकाव्यम्

(द्वितीयः सर्गः)

महाकवि कालिदास : एक संक्षिप्त परिचय

(2017 NF, NI, 18 BD, BE, 19 DA, DD)

जीवन-वृत्त एवं जन्म-स्थान—महाकवि कालिदास के जीवन-वृत्त के विषय में कोई भी प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध नहीं है। उन्होंने अपने ग्रन्थों में, महाकवि बाण के तुल्य, अपने जीवन के विषय में कोई सामग्री नहीं दी है, अतः अन्तःसाक्ष्य का अभाव है। परवर्ती काव्यों, महाकाव्यों या नाटकों में भी कहीं कालिदास के जीवन के विषय में कोई उल्लेख नहीं है, अतः बहिःसाक्ष्य का भी प्रायः अभाव है। केवल कुछ किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं, जिनके आधार पर कालिदास के जीवन पर कुछ प्रकाश पड़ता है।

कालिदास के जन्म-स्थान के विषय में भी पर्याप्त मतभेद है। कश्मीर के विद्वान् उनको कश्मीरी सिद्ध करते हैं, बंगाल के विद्वान् बंगाली और उज्जैन के विद्वान् उज्जयिनी-निवासी। 'मेघदूत' में कालिदास ने उज्जयिनी के प्रति विशेष आग्रह और आदर-भाव प्रदर्शित किया है, इससे ज्ञात होता है कि वे उज्जयिनी के निवासी थे या अधिक समय तक उज्जयिनी में रहे। 'मेघदूत' में उज्जयिनी नगरी के सौन्दर्य, शिप्रा नदी और महाकाल के मन्दिर का विशेष वर्णन मिलता है। विद्वानों का कहना है कि ये राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से थे। विक्रमादित्य के निम्नलिखित नवरत्न कहे जाते हैं :

धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशंकुवेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेःसभायां रत्नानि वै वररुचिर्नवविक्रमस्य॥

इनके विषय में एक मत यह भी है कि ये उज्जयिनी के राजा भोज के सभासद थे। एक कथा के अनुसार उनका सम्बन्ध श्रीलङ्का के राजा कुमारदास (500 ई.) से बताया जाता है। इनके विषय में अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं, किन्तु जो किंवदन्ती अधिक चल पड़ी है, उसके अनुसार पहले ये बड़े ही मूर्ख थे। एक बार किसी राजा की कन्या ने जिसका नाम विद्योत्तमा कहा जाता है, प्रतिज्ञा की कि जो विद्वान् शास्त्रार्थ में उसे हरा देगा उसी से वह अपना विवाह करेगी। उसने अनेक उद्भट विद्वानों को हराया जिससे पण्डित-समाज को अपमानित होना पड़ा, अतः उन्होंने एक ऐसा मूर्ख खोज निकाला जो उसी डाल को काट रहा था जिस पर वह बैठा था। उन्होंने उसे ले जाकर राजकुमारी के समक्ष प्रस्तुत किया और कहा कि आज पण्डित महाशय का मौन व्रत है, अतः ये संकेत द्वारा शास्त्रार्थ करेंगे। विद्योत्तमा ने इसे स्वीकार कर लिया। शास्त्रार्थ शुरू हुआ, राजकुमारी ने एक उँगली दिखायी। उसके उत्तर में मूर्ख ने दो उँगलियाँ दिखायीं। फिर राजकुमारी ने पाँच उँगलियाँ दिखायीं तो उस मूर्ख ने उत्तर में मुट्ठी दिखायी। उनके प्रश्नोत्तर का जो भी अर्थ रहा हो, किन्तु राजकुमारी ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली और उस मूर्ख पण्डित से उसका विवाह हो गया।

ऐसा कहा जाता है कि विवाह के बाद एक दिन मूर्ख कालिदास अशुद्ध शब्दों का उच्चारण कर गये, जिससे उनकी धर्मपत्नी ने मूर्ख कहकर उनका बड़ा अपमान किया। इस अपमान से पीड़ित होकर वे घर से बाहर निकल गये और अपना प्राण त्यागने के

लिए सरस्वती कुण्ड में कूद पड़े, किन्तु इनकी मृत्यु नहीं हुई। उन्होंने काली देवी की उपासना की और सरस्वती जी ने उनको वरदान दिया, जिसके फलस्वरूप कालिदास इतने प्रकाण्ड विद्वान् हुए।

विद्वान् हो जाने के बाद जब वे घर लौटे तो अपनी पत्नी से कहा 'अनावृतकपाटं द्वारं देहि।' पत्नी ने उनकी आवाज पहचानकर उत्तर दिया– 'अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः।' कहा जाता है कि कालिदास ने इनमें से तीन शब्दों को लेकर तीन काव्य-ग्रन्थ रचे। 'अस्ति' से कुमारसम्भव की रचना की जिसका प्रारम्भ 'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः' आदि श्लोक से होता है। 'कश्चित्' से मेघदूत का निर्माण किया– 'कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः' और 'वाग्' शब्द से रघुवंश की रचना की– 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ, वागर्थप्रतिपत्तये।'

कालिदास के ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि वह जन्म से ब्राह्मण थे और शिवभक्त थे, किन्तु अन्य देवताओं का भी आदर करते थे। मेघदूत और रघुवंश इस बात के परिचायक हैं कि उन्होंने भारतवर्ष का विस्तृत भ्रमण किया था। यही कारण है कि उनका भौगोलिक वर्णन बड़ा ही सुन्दर और स्वाभाविक है। उन्हें राजसी जीवन और राज-परिवारों का पूर्ण ज्ञान था। उन्होंने दरिद्रता आदि का वर्णन नहीं किया, जिससे मालूम होता है कि उनका जीवन बड़ा सुखमय और शान्त था। उन्होंने गीता, रामायण, महाभारत, वेद, पुराण, धर्मशास्त्र, दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद, संगीत, व्याकरण, छन्दःशास्त्र और काव्यशास्त्रादि का गम्भीर अध्ययन किया था, ऐसा उनके ग्रन्थों से विदित होता है।

कालिदास की रचनाएँ– कालिदास की सात रचनाएँ प्रसिद्ध हैं–

➥ नाटक

(1) मालविकाग्निमित्र– यह पाँच अङ्कों का नाटक है, जिसमें विदिशा के राजा अग्निमित्र तथा मालवदेश की राजकुमारी मालविका का प्रेम और उनके विवाह का वर्णन है।

(2) विक्रमोर्वशीय– यह भी पाँच अङ्कों का नाटक है। इसमें राजा पुरूरवा तथा उर्वशी का प्रेम और उनके विवाह की कथा वर्णित है।

(3) अभिज्ञानशाकुन्तल– यह कालिदास का विश्वविख्यात नाटक है, जिसमें आठ अङ्कों में दुष्यन्त और शकुन्तला के विवाह की कथा का वर्णन है।

➥ काव्य-ग्रन्थ

(4) कुमारसम्भव– यह सत्रह सर्गों का महाकाव्य है जिसमें शिव-पार्वती के विवाह, कुमार स्वामिकार्तिकेय का जन्म तथा कुमार द्वारा तारकासुर के वध की कथा है, किन्तु यह अधूरा ही उपलब्ध होता है।

(5) रघुवंश– यह उन्नीस सर्गों का महाकाव्य है। इसमें भगवान् रामचन्द्र जी के पूर्वज महाराज रघु के जन्म से लेकर उनके बाद के सभी राजाओं की कथा है।

➥ गीतिकाव्य या खण्डकाव्य

(6) ऋतुसंहार–कालिदास की प्रथम काव्यकृति है। इसमें छहों ऋतुओं का बड़ा ही मनोरम वर्णन है।

(7) मेघदूत– यह एक खण्डकाव्य है। इसमें एक वियोगी यक्ष का अपनी विरहिणी पत्नी के पास बादल द्वारा सन्देश भेजने का बड़ा ही सुन्दर वर्णन है।

कालिदास का समय–कालिदास के समय के विषय में प्रामाणिक सामग्री का नितान्त अभाव है। कालिदास ने स्वयं या उनके समकालीन किसी भी लेखक ने उनके विषय में कुछ भी नहीं लिखा है। उनके समय के विषय में जो मत प्रस्तुत किये गये हैं, वे अनुमान पर आधारित हैं। कालिदास के समय के विषय में केवल एक तथ्य अकाट्य माना जाता रहा है, वह है कालिदास का विक्रमादित्य के नवरत्नों में होना।

विक्रमादित्य का समय विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न कालों में निर्धारित कर कालिदास का स्थिति-काल छठी शताब्दी ईसवी से लेकर प्रथम शताब्दी ईसवी पूर्व तक दोलायमान कर रखा है। उनके स्थिति-काल के विषय में निम्न मत प्रस्तुत किये गये हैं–

(1) चतुर्थ–पञ्चम शताब्दी ई. या गुप्तकालीन मत

(2) द्वितीय शताब्दी ई. पू. का मत

(3) षष्ठ शताब्दी ई. का मत

(4) प्रथम शताब्दी ई. पू. का मत

इनमें से प्रथम शताब्दी ई. पू. का मत ही युक्तियुक्त है, जिसका उपपादन अन्य मतों का निराकरण करते हुए किया गया है। संक्षेप में–

➥ (1) चतुर्थ-पञ्चम शताब्दी ई. या गुप्तकालीन मत

यूरोपीय विद्वानों ने गुप्त नरेशों के समुन्नत साम्राज्य-काल में कालिदास का होना माना है। कीथ महोदय इस मत के समर्थक हैं कि शकों को भारत से निकाल बाहर करनेवाले, विक्रमादित्य की उपाधि धारण करनेवाले तथा अपने पूर्व के मालव संवत् को विक्रम संवत् के नाम से प्रचलित करनेवाले द्वितीय गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त (375–413 ई.) थे। उनके मतानुसार भारतीय इतिहास के इसी स्वर्णयुग में महाकवि कालिदास का होना पाया जाता है। इस मत के समर्थन में यह कहा जाता है कि कालिदास के 'कुमारसम्भव' नामक महाकाव्य की रचना सम्भवतः चन्द्रगुप्त के पुत्र कुमारगुप्त के जन्म को लक्ष्य में रखकर की गयी जान पड़ती है। कालिदास ने गुप् धातु का बार-बार प्रयोग किया है। हरिषेण कृत 'प्रयागवाली प्रशस्ति' में किये गये समुद्रगुप्त (336–375 ई.) के विजय-वर्णन में तथा 'रघुवंश' में वर्णित रघु के दिग्विजय में घटनाओं का बड़ा साम्य दिखायी पड़ता है। कालिदास के ग्रन्थों में वर्णित सुख-शान्ति का समृद्धिकाल गुप्तकाल का ही सूचक है।

➥ (2) द्वितीय शताब्दी ई. पू. का मत

डॉ. कुन्हन राजा कालिदास की स्थिति ई. पू. द्वितीय शती में मानते हैं। वे कहते हैं कि कालिदास शुंगवंशीय राजा अग्निमित्र के समकालीन थे और 'मालविकाग्निमित्र' नाटक के भरत-वाक्य में उन्होंने अग्निमित्र का उल्लेख भी किया है। डॉ. राजा ने अग्निमित्र की राजधानी विदिशा बतायी है, जिसका उल्लेख कालिदास ने 'मेघदूत' में किया है।

➥ (3) षष्ठ शताब्दी ई. का मत

डॉ. हार्नली का मत है कि छठी शताब्दी में मालवदेश के राजा यशोधर्मन ने हूणों को परास्त करके 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण की थी। फर्गुसन महोदय के मतानुसार इस विजय के उपलक्ष्य में इसी विक्रमादित्य उपाधिधारी राजा यशोधर्मन ने विक्रम संवत् चलाया और प्राचीनता का पुट देने के लिए 600 वर्ष पूर्व से (57 ई. पू. से) प्रचलित किया।

कुछ लोगों का कहना है कि 'मेघदूत' में कालिदास ने दिङ्नाग और निचुल का नामोल्लेख किया है, अतः वह दिङ्नाग का समकालीन था। दिङ्नाग एक बौद्ध दार्शनिक था जो 400–450 ई. में हुआ था।

➥ (4) प्रथम शताब्दी ई. पू. का मत

भारत में यह बात लोक-प्रसिद्ध है कि महाराज विक्रमादित्य उज्जयिनी के राजा थे। उन्होंने शकों को परास्त कर अपनी विजय के उपलक्ष्य में 57 ई. पू. में विक्रमीय संवत् का प्रवर्तन किया। सोमदेवकृत 'कथासरित्सागर' में उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य का उल्लेख है। यह ग्रन्थ गुणाढ्य कृत बृहत्कथा पर आधारित है। गुणाढ्य का समय लगभग 78 ई. माना जाता है। 'कथासरित्सागर' का वृत्तान्त ऐतिहासिक और प्रामाणिक माना जा सकता है, क्योंकि उसके मूल लेखक गुणाढ्य विक्रमादित्य के समय के अत्यधिक समीप थे। 'कथासरित्सागर' में विक्रमादित्य के राज्याभिषेक का वर्णन है–

सोऽपि तद्विक्रमादित्यो राज्यमासाद्य पैतृकम्।
नभो भास्वानिवारेभे राजा प्रतपितुं क्रमात्॥

विक्रमादित्य संस्कृत भाषा का संरक्षक और उद्धारक था। वह कवियों का आश्रयदाता था, अतः वह कालिदास का आश्रयदाता रहा होगा।

कालिदास ने कितने ही अपाणिनीय प्रयोग किये हैं। इससे ज्ञात होता है कि कालिदास उस समय हुए थे, जब पाणिनीय व्याकरण पूर्णतया प्रतिष्ठित नहीं हुआ था। कालिदास की शैली से ज्ञात होता है कि उनके समय में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। पतञ्जलि (150 ई.पू.) के समय में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। यह महाभाष्य के सूत्र और वैयाकरण के शास्त्रार्थ से सिद्ध है। कालिदास का समय उनके समीप ही होना चाहिए।

प्रयाग के समीप भीटा ग्राम में एक मुद्रा प्राप्त हुई है। इसका समय ईसा से पूर्व प्रथम शती माना जाता है। इस मुद्रा पर वृक्षों को सींचती हुई दो कन्याओं तथा एक मृग का पीछा करते हुए एक राजा का चित्र अङ्कित किया गया है। विद्वानों का यह निश्चित

मत है कि यह चित्र कालिदास के सुप्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तल' के प्रथम अङ्क का है। इसलिए यह माना जाता है कि यह नाटक इससे (प्रथम शती ई. पू. से) पूर्व अवश्य लिखा गया होगा।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर कालिदास का स्थिति-काल प्रथम शताब्दी ई. पू. प्रमाणित किया गया है।

कालिदास की शैली

(2017 NC, ND, NF, NG, NH, 18 BC, BD, BE, BG, 19 CZ, DA, DB, DC, DD, DE, DF, 20 ZO, ZQ, ZS, ZT)

कविता-कामिनी-कान्त कालिदास की शैली में कहीं उपमाओं का लालित्य है, तो कहीं अर्थान्तरन्यास का अर्थ-गाम्भीर्य, कहीं उत्प्रेक्षाओं की ऊँची उड़ान है, तो कहीं प्राञ्जल पदावली का सौकुमार्य; कहीं प्रसाद है तो कहीं माधुर्य; कहीं कलाप्रधान है, तो कहीं कल्पनाप्रधान। प्रकृति के साथ तादात्म्य की अनुभूति उनके काव्य-गौरव को अधिक समुन्नत करती है।

(क) भाषा—कालिदास की भाषा की प्रमुख विशेषता यह है कि वह सदा रसानुकूल होती है। प्रकरण, प्रसङ्ग, पात्र और वर्ण्य-विषय के अनुरूप शब्दावली की संरचना मिलती है। इस प्रकार के पद-माधुर्य के कारण उनके काव्यों में संगीतात्मकता और लयात्मकता का दर्शन होता है। उनकी भाषा सरस, सरल और मनोरम है। लम्बे समासों का प्रायः अभाव है। कालिदास का यह शब्दलाघव उनकी कलात्मक अभिरुचि का परिचायक है।

(ख) भावाभिव्यक्ति—कालिदास ललित भावों के कवि हैं। उनके काव्यों में कल्पना की ऊँची उड़ान, मनोभावों की मार्मिक अभिव्यक्ति और भाव-सौन्दर्य पग-पग पर परिलक्षित होता है।

(ग) रस—कालिदास मूलतः शृङ्गार रस के कवि हैं। वे सम्भोग और विप्रलम्भ दोनों प्रकार के शृङ्गार के वर्णन में सिद्धहस्त हैं। करुण रस के भी कतिपय वर्णन अत्यन्त मार्मिक हैं। वीर रस के प्रसङ्ग यद्यपि कम हैं, तथापि उनमें कालिदास की योग्यता किसी भी प्रकार न्यून नहीं है। अन्य रसों के वर्णन अत्यल्प हैं।

(घ) गुण और रीति—कालिदास रस-सिद्ध कवि हैं। उनकी लोकप्रियता का प्रधान कारण है उनकी प्रसादपूर्ण, लालित्ययुक्त और परिष्कृत शैली। उनके सभी ग्रन्थ वैदर्भी रीति में लिखे गये हैं। मधुर शब्द, ललित रचना, समासों का सर्वथा अभाव या छोटे समासयुक्त पदों का होना, यही वैदर्भी रीति है। कालिदास की शैली में प्रसाद, माधुर्य और ओज इन तीनों गुणों की सत्ता है।

(ङ) अलङ्कार—कालिदास के काव्यों में अलङ्कार-विधान अनायास सिद्ध है। पद-पद पर अनुप्रास, उपमा, रूपक, दीपक, अर्थान्तरन्यास और उत्प्रेक्षाओं के दर्शन होते हैं। यद्यपि यमक, अतिशयोक्ति, दीपक, व्यतिरेक, प्रतिवस्तूपमा, श्लेष, निदर्शना, एकावली, दृष्टान्त, विरोधाभास, परिणाम आदि अलङ्कारों के भी सुन्दर प्रयोग मिलते हैं। उपमा कालिदास का अत्यन्त प्रिय अलङ्कार है। उनकी उपमाएँ असाधारण और मनोरम होती हैं। उनकी विशेषता यह है कि उनमें लिङ्ग-साम्य, भाव-साम्य और रमणीयता का अनुपम समन्वय है–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या।
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या॥ (रघु0 2/20)

नन्दिनी गाय राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा के बीच वैसी शोभा पा रही है, जैसी दिन और रात के मध्य में होनेवाली रक्तवर्ण सन्ध्या।

अवाकिरन् बाललताः प्रसूनैराचारलाजैरिव पौरकन्याः॥ (2/10)

दिलीप के ऊपर बाललताओं ने फूलों की उसी प्रकार वर्षा की जैसे नगर की कन्याएँ मङ्गलार्थक धान के लावों की वर्षा करती हैं।

अर्थान्तरन्यास में कवि का व्यावहारिक ज्ञान उच्च रूप में प्रकट हुआ है। उनके अर्थान्तरन्यास सुभाषित के रूप में प्रचलित हो गये। कहा भी गया है–**अर्थान्तरस्य विन्यासे कालिदासो विशिष्यते।**

(च) वर्णन-वैचित्र्य—कालिदास के वर्णनों में वैचित्र्य और वैविध्य दोनों हैं। उन्होंने अन्तःप्रकृति और बाह्य प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण किया है। मनोभावों का विशद् वर्णन, प्रकृति का मानवीकरण, प्रकृति के साथ तादात्म्य की अनुभूति, वर्णनों में सजीवता और स्वाभाविकता, भावानुकूल पद-विन्यास, तात्त्विक वर्णनों के साथ व्यञ्जना वृत्ति का आश्रय, कला में कल्पना का संयोग और सरल भाषा में भावों की अभिव्यक्ति आदि गुण कालिदास के वर्णनों की विशेषताएँ हैं। सन्ध्याकाल में सूर्यास्त का कितना मनोरम वर्णन है–

सञ्चारपूतानि दिगन्तराणि कृत्वा दिनान्ते निलयाय गन्तुम्।
प्रचक्रमे पल्लवरागताम्रा प्रभा पतङ्गस्य मुनेश्च धेनुः॥ (रघु0 2/15)

छन्दोयोजना—महाकवि कालिदास छन्दों के प्रयोग में अति कुशल हैं। वे भावानुकूल छन्दों का प्रयोग करते हैं। करुण भावों को व्यक्त करने के लिए मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग तथा गहन एवं गम्भीर भावों को व्यक्त करने के लिए वे शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग करते हैं।

रघुवंश और कुमारसम्भव के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कालिदास को छोटे छन्द अधिक प्रिय थे। बड़े छन्दों का प्रयोग सर्गान्त में किया गया है। छोटे छन्दों में भी अनुष्टुप् अतिप्रिय छन्द है।

कालिदास की सर्वतोमुखी प्रतिभा उन्हें विश्व-साहित्य में असाधारण स्थान प्रदान करती है। उन्होंने महाकाव्य, गीतिकाव्य तथा नाट्य-रचना सभी में अपनी प्रखर प्रतिभा का समान परिचय दिया है।

उपमा कालिदासस्य

(2019 DD, 20 ZP, ZU)

अनेक चमत्कारपूर्ण उपमाओं की उद्भावना कालिदास की कविता कामिनी की कोई सानी नहीं रखती है। वे उपमा के सम्राट् हैं। उनकी सभी उपमायें वचन और लिङ्ग का विचार कर यथार्थ एवं वैज्ञानिक धरातल पर लिखी गई प्रतीत होती हैं।

कालिदास ने केवल भौतिक पदार्थों को ही उपमान नहीं बनाया है, बल्कि वेदशास्त्र, दर्शन, स्मृति, व्याकरण आदि को भी उपमान बनाया है। सुदक्षिणा वन की ओर जाती हुई नन्दिनी का अनुगमन करती है। वह उस समय ऐसी लग रही है जैसे वेदों के पीछे स्मृतियाँ चलती हैं–

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुम्, अपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वर धर्मपत्नी, श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत् ॥

स्वयंवर में आये हुए राजाओं का परिचय प्राप्त करती हुई इन्दुमती आगे बढ़ती जाती है। वह जिन राजाओं को छोड़कर आगे बढ़ती जाती थी, उन राजाओं की इच्छाओं का दमन होता जाता था—

संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ, ये यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्र मार्गाद् इव प्रपेदे, विवर्णभावः स स भूमिपालः॥

रघुवंश महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में जब महाराज दिलीप नन्दिनी को चराकर वापस लौटते हैं, तो सुदक्षिणा उनकी प्रतीक्षा करती हुई स्वागत हेतु खड़ी है। दोनों के मध्य नन्दिनी उसी प्रकार शोभा पा रही थी जिस प्रकार दिन और रात के बीच सन्ध्या–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन, प्रत्युद्गता पार्थिवधर्म पत्न्या।
तदन्तरे सा विरराज धेनुः, दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या॥

निम्न श्लोक में उपमा लौकिक भाव-बोध में गहरी उतरती दिखाई देती है। सम्पूर्ण श्लोक में चारुत्व का केन्द्रबिन्दु उपमा प्रयोग ही है। कालिदास ने साहचर्य द्योतित करने के लिए 'छाया' को उपमान के रूप में लिया है—

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां निषेदुषीमासनबन्ध धीरः।
जलाभिलाषी जलमाददानां छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्॥

महाकवि कालिदास ने उपमाओं का चयन करने के लिए पौराणिक कथाओं का भी आश्रय लिया है। अमूर्त कल्पनाओं के सृजन में भी कवि को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। भोजन के लिए पारण के समय उपस्थित नन्दिनी सिंह को उस प्रकार तृप्ति प्रदान करनेवाली थी जैसे चन्द्रमा का अमृत राहु को सन्तोष प्रदान करता है–

तस्यालमेषा क्षुधितस्य तृप्त्यै, प्रतिष्टकाला परमेश्वरेण।
उपस्थिता शोणित पारणा मे, सुरद्विषः चान्द्रमसी सुधेव॥

इस प्रकार कहा जा सकता है कि महाकवि कालिदास को उपमा के क्षेत्र में अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है।

●●

रघुवंश महाकाव्य : एक संक्षिप्त परिचय

महाकवि कालिदास द्वारा विरचित 'रघुवंश महाकाव्यम्' (द्वितीयः सर्गः) को पाठ्यक्रम में प्रमुखता से स्थान दिया गया है। महाकवि कालिदास की सात रचनाओं में रघुवंश को लेकर कहा जाता है–

''क इह रघुकारे न रमते?।''

अर्थात् संसार में कौन ऐसा व्यक्ति होगा, जिसे रघुवंश को पढ़ने और सुनने में रमण अर्थात् सम्पूर्ण आनन्द की प्राप्ति नहीं होगी। सम्पूर्ण आनन्द किसी सम्पूर्ण और श्रेष्ठ रचना से ही प्राप्त हो सकता है।

इसी प्रकार से गीतिकाव्यों में मेघदूत को लक्ष्य कर कहा गया है–

''मेघे माघे गतं वयः।''

अर्थात् कालिदास के 'मेघदूत' को तथा माघ के 'शिशुपालवध' को पढ़ने और समझने में एक विद्वान् व्यक्ति की समस्त आयु बीत सकती है। आधा जीवन भी यदि एक मेघदूत में व्यतीत माना जाय तो स्वतः सिद्ध है कि यह गीतिकाव्य अत्युत्तम है।

एवमेव कहा जाता है कि जीवित मनुष्यों को भूलोक का आनन्द मिलता है। देवतागण भुवःलोक में सुख प्राप्त करते हैं और पुण्यात्माओं को स्वर्गलोक का परमानन्द प्राप्त होता है। परन्तु समीक्षक कहते हैं कि जीवित व्यक्ति भूः, भुवः और स्वः तीनों लोकों का आनन्द एक साथ और एक ही रचना से प्राप्त करना चाहे तो उसे केवल एक 'अभिज्ञानशाकुन्तल' का पठन, मनन, श्रवण, अधिग्रहण करना चाहिए–

''वासन्तं कुसुमं फलं च युगपत् ग्रीष्मस्य सर्वं च यत्,
यच्चानन्यमनसो रसायनमतः सन्तर्पणं मोहनम्।
एकीभूतमभूतपूर्वमथवा स्वर्लोकभूलोकयो–
रैश्वर्यं यदि वाञ्छसि प्रियसखे शाकुन्तलं सेव्यताम्॥''

उपर्युक्त तीनों अतिश्रेष्ठ रचनाओं में भी महाकाव्य 'रघुवंश' के नाम की सार्थकता निम्नलिखित वाक्य से स्वतः स्पष्ट होती है–

''रघूणां वंशः वर्ण्यते यस्मिन् तत्काव्यम्।''

अर्थात् जिस महाकाव्य में रघु के वंश का अथवा रघुवंश के राजाओं का वर्णन किया गया है, उसका नाम रघुवंश है।

सम्पूर्ण रघुवंश महाकाव्य का कथानक 19 सर्गों में विभक्त है। सभी सर्गों की कुल श्लोक संख्या 1569 है। कथा के अनुसार प्रत्येक सर्ग का पृथक् से नाम भी रखा गया है। उदाहरण के लिए हमारे पाठ्यक्रम में निर्धारित प्रथम सर्ग में 95 श्लोक हैं और इसका अभिधान है– 'वसिष्ठाश्रमाभिगमन' अर्थात् महर्षि वसिष्ठ के आश्रम की ओर गमन करना।

वैवस्वत मनु के वंशज राजा दिलीप और उनकी रानी सुदक्षिणा के कोई सन्तान नहीं हुई। दुःखी होकर वे दोनों कुलगुरु वसिष्ठ के आश्रम में गए। महर्षि वसिष्ठ ने कामधेनु की पुत्री नन्दिनी की सेवा करने का मार्ग सुझाया, ताकि अभीष्ट फल की प्राप्ति का वरदान पाया जा सके।

राजा दिलीप व रानी सुदक्षिणा ने इक्कीस दिनों तक नन्दिनी की सेवा की। बाईसवें दिन नन्दिनी ने राजा की प्रतिज्ञा व सेवा की परीक्षा ली। एक मायावी सिंह ने गाय को खाना चाहा। राजा ने गाय की रक्षा कर स्वयं को प्रस्तुत किया। विचलित न होते देखकर नन्दिनी प्रसन्न हुई और राजा को पुत्रप्राप्ति का वरदान दिया।

दिलीप व सुदक्षिणा के रघु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। बड़ा हुआ। उसका विवाह किया। युवराज बनाकर राजगद्दी सौंप दी। स्वयं दिलीप ने 100 अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न किए। रघु को राजा बनाकर वन में चले गए।

रघु ने दिग्विजय यात्रा प्रारम्भ की। चारों दिशाओं में घूमता हुआ घोड़ा हिमालय पर पहुँचा। वहाँ विजयध्वज लहराकर अयोध्या लौटा। विश्वजित् नामक यज्ञ किया।

रघु के अज नामक पुत्र पैदा हुआ। बड़े होने पर अज विवाह के लिए विदर्भ के राजा भोज द्वारा आयोजित स्वयंवर में गए।

स्वयंवर में राजा भोज की बहन इन्दुमती ने सबको छोड़कर अज के गले में वरमाला डाली। राजा भोज ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी बहन का विवाह अज से कर दिया। यहीं पर प्रदत्त एक उपमा के कारण 'दीपशिखा कालिदास' उपाधि प्रसिद्ध हुई।

अज इन्दुमती को लेकर राजधानी में पहुँचे। रघु ने अज का राज्याभिषेक किया और सारा भार उसे सौंपकर वन में चले गए।

अज और इन्दुमती के पुत्र दशरथ का जन्म हुआ। दुर्घटना में इन्दुमती की मृत्यु हो गई। अपनी पत्नी के वियोग में किया गया अज का विलाप सम्पूर्ण साहित्य में प्रसिद्ध है। दशरथ का राज्याभिषेक कर अज ने भी प्राण त्याग दिए।

दशरथ ने कौशल्यादि तीन रानियों से विवाह किया। तमसा नदी के तट पर भूलवश शब्दवेधी बाण से श्रवणकुमार का वध हो गया। उसके अन्धे माता-पिता ने दशरथ को शाप दिया।

सन्तानहीनता से परेशान दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ कराया। तीन रानियों से चार पुत्र पैदा हुए। कौशल्या के राम, सुमित्रा के लक्ष्मण व शत्रुघ्न और कैकयी के भरत।

विश्वामित्र यज्ञ व तपस्वियों की रक्षा के लिए राम व लक्ष्मण को मांग ले गए। मिथिलानरेश जनक द्वारा आयोजित स्वयंवर में राम ने शिवधनुष तोड़कर सीता का वरण किया। इसी तरह लक्ष्मण का उर्मिला से, भरत का माण्डवी से व शत्रुघ्न का श्रुतकीर्ति से विवाह हुआ।

राम के राज्याभिषेक की घोषणा से तिलमिलाकर कैकयी ने अपने वर मांगकर राम को चौदह वर्षों का वनवास और भरत को राजगद्दी दिलवा दी। पंचवटी में लक्ष्मण ने रावणभगिनी शूर्पणखा के नाक-कान काट लिए। रावण ने कुद्ध होकर सीता को चुरा लिया। हनुमान्जी ने सीता को खोजा। राम ने लंका पर चढ़ाई की। रावण को मारा। विभीषण को लंकाधिपति बनाया। स्वयं अयोध्या लौट आए।

पुष्पक विमान में आते समय सीता को पम्पासरोवर, पञ्चवटी, गोदावरी आदि स्थान दिखाए। अयोध्या के उपवन में ठहरे। भरत आकर उनसे मिले।

सीता के चरित्रविषयक सामाजिक कलंक के कारण राम ने सीता का निर्वासन कर दिया। लक्ष्मण गर्भवती सीता को वाल्मीकि के आश्रम में छोड़ आए।

वाल्मीकि आश्रम में सीता के लव और कुश नामक दो पुत्र हुए। बड़े हुए। लक्ष्मण के अंगद व चित्रकेतु, भरत के तक्ष व पुष्कल तथा शत्रुघ्न के शत्रुघाती व सुबाहु दो-दो पुत्र उत्पन्न हुए। सीता की प्रार्थना स्वीकार कर धरती फट गई। सीता धरती में समा गईं। राम भी अपने भाइयों के साथ स्वर्गारोहण कर गए।

शेष सातों भाइयों ने मिलकर कुश को अपने परिवार का मुखिया बनाया। कुश का नागकन्या कुमुद्वती से विवाह हुआ।

कुश व कुमुद्वती के पुत्र अतिथि ने चारों प्रकार की विद्यायें सीखीं। निषधराज की कन्या से अतिथि का विवाह हुआ। कुश की मृत्यु पर कुमुद्वती भी सती हो गई।

अतिथि के निषध और निषध के नल इत्यादि होते-होते रघुवंश में कुल 21 राजा क्रमशः उत्पन्न होकर राजगद्दी सम्भालते रहे। अन्तिम राजा अग्निवर्ण था।

भोगविलास में आकंठ डूबने के कारण अग्निवर्ण को क्षयरोग हो गया। उसका शरीर गल-गल कर पीला पड़ गया। अन्त में मर गया। उसकी गर्भवती रानी सिंहासन पर बैठी। मन्त्रियों की सलाह लेकर राजकाज करने लगी।

यही संक्षिप्त कथानक है, उस रघुवंश नामक महाकाव्य में विद्यमान 19 सर्गों का जिसमें सूर्यवंशी या इक्ष्वाकुवंशी राजाओं

की जीवनगाथा का क्रमशः वर्णन किया गया है। इन सभी 21 राजाओं में क्योंकि राजा रघु ने ही दिग्विजय की थी और अन्य किसी ने दसों दिशाओं को नहीं जीता था। अतः रघु ही प्रधान हुए और उनका तथा उनके वंश का वर्णन होने के कारण इस महाकाव्य का नाम 'रघुवंश' सर्वथा सार्थक सिद्ध हुआ।

कालिदास की विनम्रता– महान् लोगों की महानता का मूल कारण ही यह होता है कि सारा संसार उन्हें महान् मानता है परन्तु वे स्वयं अपने-आपको ऐसा नहीं मानते हैं। कालिदास भले ही विश्वकवि, कविकुलगुरु, कविकुलशिरोमणि, दीपशिखाकालिदास इत्यादि विशिष्ट उपाधियों से विभूषित किए गए हों परन्तु सूर्यवंश का वर्णन करने में वे अपने-आपको बहुत छोटा मानते हैं–

''क्व सूर्यप्रभवो वंशः, क्व चाल्पविषया मतिः।''

अर्थात् कहाँ तो सूर्य की परम्परा में वैवस्वत मनु का वंश और कहाँ अत्यल्प विषयों को जानने वाली मेरी छोटी-सी बुद्धि?

जिस वाक्य में दो अलग वस्तुओं के लिए दो बार 'क्व' शब्द का प्रयोग होता है, वहाँ पर उन दोनों विषयों में महदन्तर ज्ञात होता है। कालिदास स्वयं को सूर्यवंश के राजाओं का वर्णन करने में समर्थ नहीं मानते हैं और अपने इस प्रयास को उसी तरह का मानते हैं, जैसे कोई अल्पबुद्धि व्यक्ति लकड़ी की छोटी-सी नाव या डोंगी में बैठकर महासागर को तैरने का प्रयास करे।

कालिदास की बुद्धि उडुप है और सूर्यवंश महासागर है। परन्तु ऐसा होने पर भी प्रयास तो करना ही होता है। विशेषता भी इसी बात में है कि डोंगी से महासमुद्र को पार किया जाये। तभी तो वाहवाही मिलती है अन्यथा बड़े जहाज में बैठकर तो कोई भी समुद्र को पार कर सकता है। उसमें कौन-सी बड़ी बात है।

इसी बात का विस्तार करते हुए कालिदास दूसरा उदाहरण देते हैं और कहते हैं कि –

''मन्दः कवियशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्।''

अर्थात् मैं मन्दमति होकर भी एक कवि के रूप में यश को प्राप्त करने की इच्छा रखता हूँ तो उसी प्रकार से उपहास का पात्र बनूँगा जिस प्रकार से वामनशरीरी व्यक्ति उपहासास्पद बन जाता है, जब वह किसी ऊँची डाली पर लगे फल को तोड़ने का प्रयास उछल-उछल कर करता है। लम्बे हाथों वाला भी जिसे आसानी से नहीं प्राप्त कर सकता, उसे बौना व्यक्ति उछलकर प्राप्त करने का प्रयास करे तो हँसी का पात्र तो बनेगा ही।

यहाँ पर वामनशरीरी और मन्दमति होकर भी महाकवि का यश प्राप्त करने का प्रयास करते हुए कालिदास वास्तव में महर्षि वाल्मीकि तथा महर्षि च्यवन की ओर संकेत करते हैं। ये दोनों ही महाशय कालिदास से पूर्ववर्ती हैं। दोनों ने सूर्यवंश में उत्पन्न राजाओं का यशोगान किया है। दोनों ने ही संसार में अपने इस कार्य के लिए महाकवि के रूप में ख्याति प्राप्त की है। स्वयं से पहले यदि कोई व्यक्ति सम्पूर्ण और बड़ी सफलता उसी क्षेत्र में प्राप्त कर चुका होता है तो परवर्ती व्यक्ति के मन में शंकायें और अधिक बढ़ जाती हैं। पूर्ववर्तियों से आगे निकलने की इच्छा तो मन में रहती है परन्तु सफलता को लेकर सन्देह और बढ़ जाता है।

मन में ऐसी और इतनी शंकाओं के होते हुए भी अपने द्वारा किए जा रहे प्रयास के कारण का उल्लेख करते हुए कालिदास कहते हैं कि यूँ देखा जाय तो मेरा मार्ग थोड़ा सरल ही है। मुझसे पूर्ववर्ती विद्वान् महाकवियों ने इस विषय को लेकर और सूर्यवंश का वर्णन कर मुख्य द्वार तो खोल ही रखा है। मुझे पहली बार बन्द दरवाजे को नहीं खोलना है। यह तो सभी जानते हैं कि खुले हुए दरवाजे से किसी भी भवन में प्रवेश करना आसान वैसे ही होता है जैसे किसी कठोरमणि में हीरे से यदि छेद कर दिया जाय तो उस छेद में धागे के लिए प्रवेश करना बहुत आसान हो जाता है। इसलिए जीवन में पथचयन को लेकर कभी सन्देह उत्पन्न होवे तो कहा जाता है–

''महाजनो येन गतः स पन्थाः।''

अर्थात् महान् जन जिस नीति या पद्धति को लेकर चले हों, उसी सिद्धान्तमय पथ पर अग्रसर हो जाना चाहिए। कालिदास ने भी यही किया है।

रघुवंशी राजाओं की विशेषताएँ

'रघुवंश' महाकाव्य के प्रारम्भ में मंगलाचरण और अपनी अल्पज्ञता को उपस्थित करने के बाद तथा पूर्ववर्ती महाकवियों के पदचिह्नों का अनुसरण करने का विचार प्रकट करते हुए कालिदास कहते हैं कि अब मैं उन रघुवंशी राजाओं का वर्णन करने जा रहा हूँ, जो आजन्म शुद्ध हैं। यहाँ पर आजन्म शुद्धि से तात्पर्य जन्म लेने के पश्चात् उन राजाओं का सभी प्रकार के संस्कारों से संस्कारित होने से है। क्योंकि जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, कर्णवेध, चूड़ाकर्म, उपनयन, वेदारम्भादि संस्कारों को यथासमय सम्पन्न करने पर ही जन्म की शुद्धि होती है। रघुवंशी राजाओं के गर्भाधान से लेकर अंत्येष्टि तक सभी संस्कार यथाविधि और यथा समय सम्पन्न किए जाते थे।

दूसरी विशेषता है– **'आफलोदयकर्मणाम्'** अर्थात् रघुवंशी राजा फल प्राप्ति हो जाने तक निरन्तर कर्म करते ही हैं। न तो किसी काम को हड़बड़ी में प्रारम्भ करते हैं और न ही विघ्नों के आ जाने पर कभी किसी काम को अधूरा छोड़ते हैं। ये राजा उत्तमगुणी हैं क्योंकि–

''न प्रारब्धमुत्तमगुणाः परित्यजन्ति''

अर्थात् श्रेष्ठगुणसम्पन्न व्यक्ति एक बार प्रारम्भ किए कार्य को पूरा करके ही विश्राम लेते हैं।

तीसरी विशेषता सूर्यवंशी राजाओं की यह है कि वे पृथ्वी के किसी एक छोटे भू-भाग पर राज नहीं करते अपितु समुद्र से लेकर समुद्र पर्यन्त फैली हुई सम्पूर्ण पृथ्वी पर उनका एकच्छत्र राज रहता है। यही कारण है कि वे चक्रवर्ती सम्राट की उपाधि से विभूषित होते हैं।

चौथी विशेषता के अनुसार प्रस्तुत वंश के राजाओं के रथ का मार्ग स्वर्ग तक जाता है।

'अनाकरथवर्त्मनाम्' कहने का यही तात्पर्य है कि इन राजाओं के सम्बन्ध केवल पृथ्वीलोक पर ही नहीं हैं अपितु स्वर्ग के अधिपति इन्द्र और अन्य देवताओं से भी इनके सहज सम्बन्ध हैं।

पाँचवीं विशेषता के अनुसार ये सभी राजा **यथाविधिहुताग्नि** हैं। अर्थात् वैदिक विधि-विधान के अनुसार देवताओं का पूजन, हवन, यज्ञादि सम्पन्न करते हैं। इससे उनके राज्य में सुखशान्ति व समृद्धि रहती है। कभी अनावृष्टि अथवा अतिवृष्टि जैसे प्राकृतिक प्रकोप उन्हें झेलने नहीं पड़ते हैं।

छठी विशेषता के अनुसार ये राजा **यथाकामार्चितार्थी** हैं अर्थात् अपने द्वार पर उचित कामना और प्रार्थना लेकर आए हुए याचकों को कभी निराश नहीं करते। उन्हें खाली हाथ नहीं लौटाते हैं। **'अतिथि देवो भव'** की भावना का समुचित रूप से पालन करते हैं।

सप्तम वैशिष्ट्य इन राजाओं का यथापराधदण्डी होना है अर्थात् प्रथमतः तो उनके राज्य में कोई अपराध करने की हिम्मत ही नहीं करता था। यदि कोई अपराध करता तो तत्काल उसे उचित मात्रा में दण्ड मिल जाता था। निरपराध को दण्ड नहीं भुगतना होता था। शासन का तीसरा स्तम्भ न्याय व्यवस्था समुचित थी।

आठवीं विशेषता उन राजाओं की यह है कि वे त्यागाय-संभृतार्थ हैं। अर्थात् केवल अपने ऐशो-आराम के लिए अथवा खजाने को भरने मात्र के लिए प्रजा से कर नहीं वसूलते हैं। अपितु व्यक्तिगत रूप से कर इकट्ठा करने के बाद वे प्रजा के हित के लिए सामाजिक और सामूहिक रूप से उसको व्यय कर देते हैं।

अग्रिम वैशिष्ट्य उन राजाओं के द्वारा सदैव सत्य ही बोला जाना है। **''सत्यं वद। धर्मं चर।''** इत्यादि उपनिषद्वाक्यों का वे पूर्णतया पालन करते हैं। सत्य बोलने का एक उत्तम तरीका है– मितभाषी होना अर्थात् कम से कम बोलना। क्योंकि आवश्यकता से अधिक बोलने वाले के झूठ बोलने की सम्भावना भी उतनी ही बढ़ जाती है।

दसवीं विशेषता सूर्यवंशी राजाओं की प्रजार्थ-गृहमेधी होना है। अर्थात् वे राजा वंशवृद्धि करने और सन्तानोत्पत्ति के लिए ही गृहस्थाश्रम का उपभोग करते हैं। केवल अपने इन्द्रियसुख के लिए ही विवाह नहीं करते। सन्तति वृद्धि के अतिरिक्त वे प्रायः तपस्वियों तथा संन्यासियों जैसा संयमित जीवन जीते हैं।

कालिदास इन मनुवंशी की अत्युत्तमजीवनवृत्ति का संक्षेप करते हुए कहते हैं–

''शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्॥''

अर्थात् शैशवकाल में वे पूर्णतया विद्यार्थी ही होते हैं। विद्या का अभ्यास करते हैं। अपने ज्ञान कोष को बढ़ाते हैं। युवावस्था में गृहस्थ धर्म को निभाने के लिए रूप, रस, गन्धादि सांसारिक विषयों का सेवन करते हैं। वृद्धावस्था में सम्राट होते हुए भी सब कुछ त्याग कर मुनियों के समान आचरण करते हैं। अन्त में योग के द्वारा अपने शरीर का त्याग स्वयं करते हैं अर्थात् किसी रोगादि के कारण उनकी मृत्यु नहीं होती। सूर्यवंशी राजाओं के चरित्र में इतनी सारी उत्तमोत्तम विशेषताओं का प्रतिपादन महाकवि द्वारा किया गया है।

रघुवंश में प्रकृति वर्णन

रघुवंश महाकाव्य के प्रथम सर्ग का भी नाम है–'वसिष्ठाश्रमाभिगमन' अर्थात् वसिष्ठ ऋषि के आश्रम की ओर जाना। अपनी सन्तानहीनता के निवारण तथा उपाय का मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए नायक-नायिका राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा वसिष्ठाश्रम की ओर प्रस्थान करते हैं।

जिस रथ पर आरूढ़ होकर राजा-रानी राजधानी से चले, वह दिखने में अत्यन्त मनोहर और आकार में बादल के समान विशाल था। रथ के पहियों में से गम्भीर ध्वनि सुनाई दे रही थी। महाकवि के शब्दों में–

''पावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव।''

अर्थात् रथारूढ़ वे दोनों ऐसे लग रहे थे जैसे घनघोर वर्षाकाल में बादल पर चढ़कर ऐरावत और बिजली– दोनों एक साथ जा रहे हों। इसमें गौरवर्णा सुदक्षिणा विद्युत है। विशालकाय दिलीप ऐरावत हैं। उपमा की सटीकता दर्शनीय है।

प्रथम तो राजा आश्रम में जा रहे थे। द्वितीय उन्हें वहाँ कोई युद्ध नहीं लड़ना था। अतः सेना को उन्होंने साथ नहीं लिया। केवल निजी एकाध सेवक को ही साथ लिया। अधिक सेना ले जाने से आश्रम में विघ्न भी उत्पन्न हो सकते हैं।

राजा और रानी को चलते समय वन में ऐसी वायु स्पर्श करते हुए सुख प्रदान कर रही थी, जो शीतल तो थी ही और साथ ही साथ शाल वृक्षों की गोंद से सुगन्धित भी हो रही थी। सुखद पवन की दोनों विशेषतायें शीतलता व सुगन्धमयता इसमें विद्यमान हैं। वन में विद्यमान वृक्षों के पत्ते धीरे-धीरे लगातार हिल रहे थे।

रथ की मधुर आवाज को सुनकर मयूर अपना सिर ऊपर उठाते और बड़ी ही मीठी आवाज में केका करते थे। मोरों की केका को सुनना आनन्दप्रद था। वनक्षेत्र सामान्य रूप से शान्त होता है। उसमें किसी बाहरी तत्त्व के प्रवेश करने पर वन-निवासी प्राणियों का आकृष्ट होना स्वाभाविक है। रथ की आवाज को सुनकर मृगों के जोड़े बहुत उत्सुकता से राजा-रानी को देख रहे थे। मृगयुगल की आँखें नरयुगल की आँखों से अत्यन्त समानता रखती हैं।

नीले आकाश में उड़ते हुए सफेद सारस पक्षियों की एकताबद्ध लम्बी कतार ऐसी दिख रही थी, मानो किसी ने बन्दनवार की ऐसी माला उपस्थित कर दी हो, जिसको बाँधने के लिए दीवार या खम्बों की आवश्यकता नहीं होती।

''पवनस्यानुकूलत्वात्प्रार्थनासिद्धिशंसिनः।''

अर्थात् मन्द-मन्द चल रही पवन की अनुकूलता दिलीप और सुदक्षिणा के लिए मनोरथसिद्धि का संकेत दे रही थी। किसी भी कार्य को करने के लिए प्रस्थान करने पर प्राकृतिक रूप से शकुनाशकुन हुआ करते हैं। वायु का अनुरूप प्रवाह भी एक मंगल संकेत प्रदान कर रहा था। यही कारण है कि घोड़ों के खुरों से उड़ने वाली धूल दोनों के शरीर का स्पर्श भी नहीं कर पा रही थी।

तालाबों के अन्दर कमल के विभिन्न रंग-बिरंगे पुष्प खिले हुए थे। पानी के कारण शीतल और कमलों की सुगन्ध के कारण सुगन्धित पवन की अनुकूलता वस्तुतः प्रशंसनीय थी। जो ग्राम स्वयं राजा दिलीप ने यज्ञ करने के बाद दक्षिणा के रूप में पुरोहितों को दिए थे, उन ग्रामों में पहुँचने पर ग्रामीण अर्घ्य लेकर राजा-रानी के पास आते और बड़े मुक्त भाव से दोनों को कार्यसिद्धि के लिए मंगलमय शुभकामनायें और आशीर्वचन देते थे।

मार्ग में अनेक प्रकार के ऐसे वृक्ष विद्यमान थे, जिनके नाम दिलीप व सुदक्षिणा नहीं जानते थे। उनके नाम वे उन वृद्ध ग्रामीणों व ग्वालों से पूछ रहे थे, जो अपनी ओर से भेंट के रूप में हैयंगवीन अर्थात् एकदम ताजा मक्खन लेकर आते थे। अपने

घर में जो भी पदार्थ विद्यमान होवे, उसे स्नेहपूर्वक समर्पित कर देना गाँव वालों का सहज स्वभाव होता है।

दोनों में राजा दिलीप रानी सुदक्षिणा के लिए मार्गदर्शक का कार्य कर रहे थे। रानी जिन-जिन पदार्थों व वनस्पतियों के बारे में पूछती, राजा यथासम्भव उनका वर्णन करके रानी की जिज्ञासा को शान्त करते थे।

नितान्त श्वेत और शुद्धवेष को धारण करने वाले दिलीप और सुदक्षिणा जाते समय कैसे लग रहे थे, इस विषय में अतीव सुन्दर उपमा इस प्रकार से दी गई है–

''हिमनिर्मुक्तयोर्योगे, चित्राचन्द्रमसोरिव।''

अर्थात् घने कोहरे से मुक्त हो जाने पर चित्रा नक्षत्र और चन्द्रमा के समान ही वे दोनों शोभायमान हो रहे थे।

इस प्रकार से दिन भर यात्रा करके राजा दिलीप अपनी महारानी के साथ सायंकाल महर्षि वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचे।

महर्षि वशिष्ठ का आश्रम

संसार में प्रत्येक स्थान विशेष की अपनी मूल विशेषतायें होती हैं। राजमहल से आश्रम का स्थान भिन्न होता है। प्रथम विशेषता के अनुसार आश्रम के कुलपति और तत्रस्थ तपस्वी स्वभाव से अत्यन्त शान्त तथा संयमी होते हैं। काम, क्रोधादि षड्विकार आश्रमवासियों के जीवन में प्रायः नहीं होते हैं। वे निश्छल और निष्कपट होते हैं।

विश्वकवि कालिदास महर्षि वसिष्ठ के पवित्र आश्रम का स्वरूप बताते हुए लिखते हैं–

''वनान्तरादुपावृत्तैः समित्कुशफलाहरैः।''

अर्थात् वहाँ रहने वाले तपस्वी वन-वनान्तरों से समिधायें, पुष्प, कुशायें, फलादि लेकर सायं आश्रम में लौटते हैं, तो यज्ञ के अग्निदेवता आगे बढ़कर उनका स्वागत उसी प्रकार से करते हैं, जिस प्रकार से अपनी सन्तानों के कार्यस्थल से वापस आने पर मातायें उनका हार्दिक स्वागत करती हैं। 'पूर्यमाण' विशेषण के प्रयोग से ज्ञात होता है कि तपस्वियों से आश्रम भरा रहता था।

आश्रम में चारों ओर पर्णकुटियाँ बनी हुई थीं। पर्णशालाओं के अन्दर ऋषियों की पत्नियाँ अपना-अपना सामान्य कार्य कर रही थीं और दरवाजे पर मृगों के यूथ इस आशा से बैठे हुए थे कि हमें अपना नीवार का भाग थोड़े समय बाद प्राप्त हो जायेगा। यहाँ मृगों और ऋषिपत्नियों के बीच में भी वही शाश्वत् सम्बन्ध है, जो परिवार में सन्तानों और माँ के बीच में होता है।

प्राकृतिक रूप से हरा-भरा वातावरण महर्षि वसिष्ठ के आश्रम की अन्यतम विशेषता है। चारों तरफ बड़े-बड़े पेड़ तो थे ही, परन्तु उन सभी के बीच-बीच में छोटे-छोटे पौधे भी विद्यमान थे। छोटे पौधों को पनपाने के लिए पानी पिलाने की जिम्मेदारी मुनिकन्याओं की थी–

''सेकान्ते मुनिकन्याभिस्तत्क्षणोज्झितवृक्षकम्।''

अर्थात् मुनिकन्याओं ने पौधों के चारों ओर मिट्टी के आलवाल बना रखे थे। वे उनमें धीरे से पानी भरती थीं और तत्काल वहाँ से दूर चली जाती थीं,ताकि उस पानी को पीकर अपनी प्यास बुझाने वाले पक्षी निर्भय होकर वहाँ पर आ सकें। उपर्युक्त पंक्ति में 'वृक्ष' शब्द से परे 'कन्' प्रत्यय का प्रयोग पौधों के अतिशय छोटा होने का भाव बताने के लिए है।

प्रातःकाल से लेकर अपराह्न तक मृग आश्रम में विद्यमान पर्णशालाओं के आँगन में बिखरे नीवार नामक धान को खाते थे। पेट भर कर वे वृक्षों की छाया में बैठ जाते थे और धीरे-धीरे रोमन्थ अर्थात् जुगाली का अभ्यास करते थे। रोमन्थ की क्रिया के द्वारा ही पशु अपने द्वारा एक साथ भक्षित भक्ष्य पदार्थ को पचाने का कार्य करते हैं।

''पुनानं पवनोद्धूतैः धूमैराहुतिगन्धिभिः'' इस वाक्य के द्वारा उस विशेषता को रेखांकित किया गया है, जो केवल आश्रम में ही मिलती है। गाँवों में भी चूल्हों से धुआँ निकलता है परन्तु वह न तो सुगन्धित होता है और न दूसरों को पवित्र करने में समर्थ। जबकि सायं आश्रम में हवन में से उठता हुआ सुगन्धित धुआँ दूसरों को पवित्र कर रहा था।

इस प्रकार से आश्रम में पहुँचने पर प्रजापालक, नीति निपुण तथा सर्वथा समर्थ राजा और रानी का सभ्य और जितेन्द्रिय मुनियों ने आगे बढ़कर हार्दिक अभिनन्दन और स्वागत किया।

●●

रघुवंश-महाकाव्यम्

(द्वितीयः सर्गः)

हिन्दी एवं संस्कृत व्याख्या

● **प्रसङ्ग –** सिंह की बातों से राजा पर होनेवाली प्रतिक्रिया का वर्णन है—

इति प्रगल्भं पुरुषाधिराजो
मृगाधिराजस्य वचो निशम्य
प्रत्याहतास्त्रो गिरिशप्रभावा-
दात्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार ॥41॥ (संस्कृत व्याख्या–2020 ZS)

अन्वय–पुरुषाधिराजः मृगाधिराजस्य इति प्रगल्भं वचः निशम्य गिरिशप्रभावात् प्रत्याहतास्त्रः, आत्मनि अवज्ञां शिथिलीचकार।

हिन्दी व्याख्या – राजा दिलीप ने सिंह के इस धृष्टतापूर्ण वचन को सुनकर यह समझ लिया कि मेरे अस्त्र की गति महादेव जी के प्रभाव से रुक गयी है। ऐसा सोचकर उन्होंने अपने अपमान की भावना को कम कर दिया।

संस्कृत व्याख्या– पुरुषाधिराजः–मनुजाधिपतिः दिलीपः, **मृगाधिराजस्य–**सिंहस्य, **इति–**पूर्वोक्तं, **प्रगल्भं–**धृष्टं, **वचः–**वचनं, **निशम्य–**श्रुत्वा, **गिरिशप्रभावात्–**महादेवप्रतापात्, **प्रत्याहतास्त्रः–**प्रत्याहतं प्रतिबद्धम् अस्त्रम् आयुधं यस्य तादृशः, **आत्मनि–**स्वविषये, **अवज्ञाम्–**अपमानं, **शिथिलीचकार–**तत्याजेत्यर्थः।

संस्कृत भावार्थ– सिंहमुखाद् आत्मनः पराभवकारणम् श्रुत्वा 'ईश्वरप्रसादात् एवं पराभूतोऽस्मि न केनाप्यन्येन कारणेन' इति मत्वा तज्जन्यापमानं त्याजेति भावः।

शब्दार्थ – पुरुषाधिराजः – पुरुषों का राजा। **मृगाधिराजस्य** – सिंह का। **प्रगल्भम्** – अभिमानपूर्ण। **निशम्य** – सुनकर; श्रुत्वा। **गिरीशप्रभावात्** – महादेव के प्रभाव से। **प्रत्याहतास्त्रः** – विफल है अस्त्र जिसका। **आत्मनि अवज्ञाम्** – अपने अपमान को। **शिथिलीचकार** – कम कर दिया।

● **प्रसङ्ग –** राजा सिंह को उत्तर देने के लिए प्रस्तुत हुआ—

प्रत्यब्रवीच्चैनमिषुप्रयोगे
तत्पूर्वभङ्गे वितथप्रयत्नः।
जडीकृतस्त्र्यम्बकवीक्षणेन
वज्रं मुमुक्षन्निव वज्रपाणिः॥42॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DA)

अन्वय–तत्पूर्वभङ्गे इषुप्रयोगे वितथप्रयत्नः (अतएव) वज्रं मुमुक्षन् त्र्यम्बकवीक्षणेन जडीकृतः वज्रपाणिः इव (स्थितोनृपः) एनं प्रत्यब्रवीत् च।

हिन्दी व्याख्या – उसी प्रथम विफलता में बाण चलाने में निष्फल प्रयत्न राजा दिलीप, जिसकी स्थिति शिव जी के देखने से वज्र-प्रहार करने की इच्छावाले जड़ीभूत इन्द्र के समान है, ने सिंह को उत्तर दिया।

संस्कृत व्याख्या– तत्पूर्वभङ्गे–सः पूर्वोक्तः एव पूर्वः प्रथमः भङ्गः प्रतिबन्धः यस्य तस्मिन्, **इषुप्रयोगे–**इषोः बाणस्य प्रयोगे प्रक्षेपे, **वितथप्रयत्नः–**विफलप्रयासः (अतएव), **वज्रं–**कुलिशं, **मुमुक्षन्–**मोक्तुमिच्छन्, **त्र्यम्बकवीक्षणेन–**त्र्यम्बकस्य शिवस्य वीक्षणेन दृष्ट्या, **जडीकृतः–**निष्पदीकृतः, **वज्रपाणिः–**इन्द्रः, **इव–**यथा, **(स्थितो नृपः) एनं–**सिंह, **प्रत्यब्रवीत् च–**प्रत्युवाच च।।

संस्कृत भावार्थ– तत्प्रथमभङ्गे शरप्रयोगे विफलप्रयासः त्रिनेत्रवीक्षणेन निष्पन्दीकृतः शक्र इव स्थितः नृपः एनम् सिंहम् प्रत्यवोचत् इति भावः।

शब्दार्थ – तत्पूर्वभङ्गे – उसी प्रथम विफलता में। **इषुप्रयोगे** – बाण चलाने में। **वितथप्रयत्नः** –विफल प्रयास। **मुमुक्षन्** – छोड़ने की इच्छा करनेवाला। **वज्रपाणिः** – इन्द्र। **त्र्यम्बकवीक्षणेन** – शङ्कर के देखने से। **जडीकृतः** - निश्चल कर दिया गया है जो वह। शिव जी के देखने से इन्द्र की गति अवरुद्ध हो गयी। वह बिल्कुल निश्चल हो गये और वज्र न चला सके।

जडीकृतः–इसमें महाभारत की एक कथा है। एक बार राक्षसों से दुःखी देवताओं ने शङ्कर जी से जाकर अपनी विपत्ति कही। शिव जी ने राक्षसों का नाश किया और उनके नगरों को जला दिया। उसी समय भगवती दुर्गा भी गोद में एक सुन्दर बालक लेकर वहाँ आ गयी। इन्द्र ने उस बालक को मारने के लिए वज्र उठाया परन्तु जब बालक ने उनकी ओर देखा तो इन्द्र जड़वत् हो गये। शिव जी ने दुर्गा को प्रसन्न करने के लिए बालक का रूप धारण किया था।

● **प्रसङ्गः –** राजा ने सिंह से कहा—

संरुद्धचेष्टस्य मृगेन्द्र कामं
हास्यं वचस्तद्यदहं विवक्षुः।
अन्तर्गतं प्राणभृतां हि वेद
सर्वं भवान्भावमतोऽभिधास्ये ।।43।। (संस्कृत व्याख्या–2019 DB)

अन्वय–हे मृगेन्द्र! संरुद्धचेष्टस्य मम तत वचः कामं हास्यम् अस्ति यद् वचः अहम् विवक्षुः अस्मि, हि भवान् प्राणभृताम् अन्तर्गतम् सर्वं भावं वेद अतः अभिधास्ये।

हिन्दी व्याख्या – हे सिंह ! मेरी चेष्टा व्यर्थ हो गयी है इसलिए जो बात मैं कहना चाहता हूँ वह परिहास करने योग्य है, तथापि आप सभी जीवों के भीतर की बात जानते हैं। अतः मैं (अपनी बात) कहूँगा।

संस्कृत व्याख्या– मृगेन्द्र–सिंह !, **संरुद्धचेष्टस्य–**संरुद्धा प्रतिबद्धा चेष्टा व्यापारः यस्य तस्य, **मम–**दिलीपस्य, **तत्–**अग्रे वक्ष्यमाणं, **वचः–**वचनं, **कामं–**पार्याप्तं, **हास्यं–**परिहसनीयम्, **अस्ति–**विद्यते, **यद्–**वचः, **अहं, विवक्षुः–**वक्तुमिच्छुः-अस्मि, **हि–**यतः-भवान्-त्वं, **प्राणभृतां–**प्राणिनाम्, **अन्तर्गतं–**हृद्गतं, **सर्वं–**सकलं, **भावम्–**अभिप्रायं, **वेद–**जानाति, **अतः–**अस्माद्धेतोः, **अभिधास्ये–**कथयिष्यामि।

संस्कृत भावार्थ– हे सिंह! यद्वचोऽहं वक्तुमिच्छामि तद्वचः प्रतिबद्धव्यापारस्य मे कामं परिहसनीयम् परन्तु यतो भवान् प्राणधारिणाम् मनोगतम् सर्वं भावं वेत्ति अतोऽहम् कथयिष्यामीति सरलार्थः।

शब्दार्थ – संरुद्धचेष्टस्य – रुके हुए व्यापारवाले। **तद्वचः** – वह बात। **कामम्** – अवश्य। **हास्यम्** – हँसी के योग्य। **विवक्षुः** – कहना चाहता हूँ। **हि** – चूँकि। **प्राणभृताम्** – प्राणियों के। **अन्तर्गतम्** – भीतर का। **वेद** – जानते हो। **अभिधास्ये** – कहूँगा।

● **प्रसङ्गः –** राजा दिलीप सिंह से कहते हैं—

मान्यः स मे स्थावरजङ्गमानां
सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः।
गुरोरपीदं धनमाहिताग्ने- (हिन्दी व्याख्या–2020 ZQ, ZT)
र्नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम् ।।44।। (संस्कृत व्याख्या–2019 DB)

अन्वय–स्थावरजङ्गमानां सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः स मे मान्यः पुरस्तात् नश्यत् आहिताग्नेः गुरोः इदम् धनम् अपि अनुपेक्षणीयम्।

हिन्दी व्याख्या – स्थावर जङ्गम के रचनेवाले, नाश करनेवाले व पालन करनेवाले, वह (महादेव जी) मेरे पूज्य हैं, तथापि अग्निहोत्र करनेवाले गुरु वशिष्ठ का सामने नष्ट होता हुआ यह गोरूपधन भी उपेक्षा करने योग्य नहीं है। अर्थात् इसकी भी रक्षा करनी चाहिए।

संस्कृत व्याख्या– स्थावरजङ्गमानां–स्थावराणां वृक्षादीनां जङ्गमानां मनुष्यादीनां चराचराणामिति यावत्, **सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः–**सर्गः सृष्टिः स्थितिः पालनंप्रत्यवहारः संहारः, तेषां हेतुः, कारणं, **सः–**शिवः, **मे–**मम, **मान्यः–**पूज्यः, **पुरस्तात्–**अग्रे, **नश्यत्–**नाशं गच्छत्, **आहिताग्नेः** कृताग्न्याधानस्य अग्निहोत्रिणः, **गुरोः–**वशिष्ठस्य, **इदं–** दृश्यमानं, **धनं–**गोरूपम्, अपि, अनुपेक्षणीयम्।

संस्कृत भावार्थ–चराचरस्य जगतः सृष्टिस्थितिसंहारकारी स भगवान् शिवः मे पूज्यः अतएव तस्याज्ञा सर्वथाऽनुल्लङ्घनीया तथा च गुरोरपि नश्चदिदं गोरूपधनं नोपेक्षणार्हमस्ति।

शब्दार्थ – स्थावरजङ्गमानाम् – अचर और चर (चल) पदार्थों का। **सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुः** – उत्पत्ति, पालन तथा नाश का कारण। **सः** – शिव। **मे** – मेरा। **मान्यः** – पूज्य। **पुरस्तात्** – सामने। **नश्यत्**– नष्ट होता हुआ। **इदम् धनम्** – यह गाय रूपी धन। **आहिताग्नेः** – अग्निहोत्र करनेवाले का। **अनुपेक्षणीयम्**– उपेक्षा करने योग्य नहीं है।

● **प्रसङ्ग –** सिंह की क्षुधा-शान्ति और गाय की रक्षा का प्रकार बताते हुए दिलीप निवेदन करते हैं–

स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं
देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद।
दिनावसानोत्सुकबालवत्सा (हिन्दी व्याख्या–2019 CZ, DC, DD, DF, 20 ZP, ZS)
विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः॥45॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DE, 20 ZO)

अन्वय–स त्वम् मदीयेन देहेन शरीरवृत्तिम् निर्वर्तयितुम् प्रसीद दिनावसानोत्सुकबालवत्सा इयम् महर्षेः धेनुः विसृज्यताम्।

हिन्दी व्याख्या – वह तुम मेरे शरीर से अपनी क्षुधा शान्त करने की कृपा करो अर्थात् गाय के बदले मुझे खा लो, दिन के अन्त में (अपनी माता के लिए) उत्सुक बछड़ेवाली महर्षि की इस गाय को छोड़ दो।

संस्कृत व्याख्या– सः–अङ्कागतसत्त्ववृत्तिः, **त्वं**–सिंहः, **मदीयेन**–मामकेन, **देहेन**–शरीरेण, **शरीरवृत्तिं**–देहजीवनं क्षुधाशान्तिं वा, **निर्वर्तयितुं**–निष्पादयितुं, **प्रसीद**–अनुगृहाण, **दिनावसानोत्सुकबालवत्सा**–दिनस्य दिवसस्य अवसाने अन्ते उत्सुकः उत्कण्ठितः बालः शिशुरूपः वत्सः अर्भकः यस्याः तादृशी, **इयं**–दृश्यमाना, **महर्षेः**–वशिष्ठस्य, **धेनुः**–गौः, **विसृज्यतां**–त्यज्यताम्।

संस्कृत भावार्थ– त्वम् मदीयेन शरीरेण क्षुधाशान्तिं कृत्वा मयि प्रसीद इमां धेनुम् मुञ्च, यतोऽस्याः वत्सः आश्रमे बद्धः बुभुक्षितः आस्ते।

शब्दार्थ – सः त्वम् – वह तुम पास में आये हुए जानवरों को खाकर निर्वाह करनेवाले। **मदीयेन देहेन** – मेरे शरीर से। **शरीरवृत्तिम्** – जीवन निर्वाह। **निर्वर्तयितुम्** – सम्पादित करने के लिए। **प्रसीद** – कृपा करो। **दिनावसानोत्सुकबाल-वत्सा** – दिन के अन्त में जिसका छोटा बछड़ा उत्सुक होगा कि मेरी माँ आ रही है। **विसृज्यताम्** – छोड़ दो। राजा के कहने का यह अर्थ था कि मुझे तो गाय के बदले खा लो और गाय को छोड़ दो, क्योंकि उसका बछड़ा दिन भर के बाद अपनी माता को देखने के लिए उत्सुक होगा।

● **प्रसङ्ग –** सिंह राजा को उत्तर देने के लिए प्रस्तुत होता है—

अथान्धकारं गिरिगह्वराणां
दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन्।
भूयः स भूतेश्वरपार्श्ववर्ती
किञ्चिद्विहस्यार्थपतिं बभाषे॥46॥

अन्वय–अथ भूतेश्वरपार्श्ववर्ती सः गिरिगह्वराणाम् अन्धकारं दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन् किञ्चिद् विहस्य अर्थपतिं भूयः, बभाषे।

हिन्दी व्याख्या – महादेव का अनुचर वह सिंह पर्वत की गुफाओं का अन्धकार दाँतों की किरणों से छिन्न-भिन्न करता हुआ कुछ हँसकर राजा से पुनः बोला।

संस्कृत व्याख्या– अथ–तत्पश्चात्, **भूतेश्वरपार्श्ववर्ती**–भूतेश्वरस्य शिवस्य पार्श्ववर्ती अनुचरः, **सः**–सिंहः, **गिरिगह्वराणां**–गिरेः-पर्वतस्य गह्वराणां गुहानाम्, **अन्धकारं**–ध्वान्तं, **दंष्ट्रामयूखैः**–दंष्ट्राणां कठोरदन्तानां मयूखैः किरणैः, **शकलानि**– खण्डानि, **कुर्वन्**–विदधत्, **किञ्चित्**–ईषत्, **विहस्य**–हसित्वा, **अर्थपतिं**–राजानं, **भूयः**–पुनः, **बभाषे**–उक्तवान्।

संस्कृत भावार्थ– गवार्थे स्वतनुं परित्यक्तुमुद्यतं नृपं दृष्ट्वा सिंहः पुनरपि किञ्चित् विहस्य तं प्रत्युवाच। तस्य कथनकाले दन्तेभ्यः महती द्युतिः समुत्पन्ना या पर्वतगुहायाः सकलम् अन्धकारम् खण्डशः कृतवती।

शब्दार्थ – अथ – राजा के कहने के बाद। **भूतेश्वरपार्श्ववर्ती** – शिव जी का अनुचर। **गिरिगह्वराणाम्** – पर्वत की गुफाओं

का। पर्वतकन्दराणाम्। **दंष्ट्रामयूखैः** – दाँतों की किरणों से। **शकलानि** – टुकड़े-टकड़े। **किञ्चित्** – थोड़ा। **विहस्य** – हँसकर। **अर्थपतिं** – राजा से। **बभाषे** – बोला।

● **प्रसङ्ग**–सिंह राजा से कहता है–

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं
नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम् ॥47॥ (हिन्दी व्याख्या–2019 DA. 0 ZO)

(संस्कृत व्याख्या– 2011 HR, HV, 19 CZ, DC, DE, DF, 20 ZQ, ZT, ZU)

अन्वय–एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः इदं कान्तं वपुः, एतत्सर्वं बहु अल्पस्य हेतोः हातुम् इच्छन् त्वं विचारमूढः मे प्रतिभासि।

हिन्दी व्याख्या –एकच्छत्र संसार का राज्य, नवीन युवावस्था और यह सुन्दर शरीर इन सब (बहुतों) को आप थोड़ी-सी बात के वास्ते छोड़ना चाहते हैं, अतः आप कार्याकार्य के विषय में मुझे मूर्ख मालूम पड़ते हैं।

संस्कृत व्याख्या– एकातपत्रम्–अद्वितीयच्छत्रं, **जगतः**–संसारस्य, **प्रभुत्वं**–स्वामित्वं, **नवं**–नवीनं, **वयः**–अवस्था, **इदं**–दृश्यमानं, **कान्तं**–कमनीयं, **वपुः**–शरीरम्(एतत्सर्वं), **बहु**–अधिकम्, **अल्पस्य**–तुच्छस्य, **हेतोः**–कारणात्, **हातुं**–त्यक्तुम्, **इच्छन्**–वाञ्छन्, **त्वं**–भवान्, **विचारमूढः**–विचारेकार्याकार्यविमर्शे मूढः मूर्खः, **मे**–मम, **प्रतिभासि**–प्रतीयसे।

संस्कृत भावार्थ– राजन् ! एकच्छत्रं जगतः स्वामित्वं यौवनं सुन्दरं शरीरं च अल्पप्रयोजनात् त्यक्तुमभिलषन् त्वं मम मूर्खः प्रतीयसे।

शब्दार्थ – एकातपत्रम् – एकच्छत्र। **प्रभुत्वम्** – राज्य। **नवं वयः** – नयी अवस्था। **कान्तं वपुः** – सुन्दर शरीर। **अल्पस्य हेतोः** – थोड़े के लिए। **बहु** – बहुत-सी वस्तु। **हातुम्** – छोड़ने के लिए। **इच्छन्** – इच्छा करते हुए। **विचारमूढ**–विचारशून्य। **प्रतिभासि** – मालूम पड़ते हो। सिंह के कहने का भाव यह है कि कहाँ तो एकच्छत्र संसार का राज्य, नयी युवा अवस्था, सुन्दर शरीर और कहाँ एक मामूली गाय। दोनों में अन्तर है। गाय एक तुच्छ वस्तु है और उस गाय के वास्ते राज्य का व शरीर का त्याग करना बड़ी मूर्खता है।

● **प्रसङ्ग** –सिंह राजा को समझा रहा है–

भूतानुकम्पा तव चेदियं गौ-
रेका भवेत्स्वस्तिमती त्वदन्ते।
जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः (हिन्दी व्याख्या–2019 DB)
प्रजाः प्रजानाथ ! पितेव पासि॥48॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DD, 20 ZO)

अन्वय–तव भूतानुकम्पा चेत् तर्हि त्वदन्ते सति इयम् एका गौः स्वस्तिमती भवेत् प्रजानाथ जीवन पुनः पिता इव प्रजाः उपप्लवेभ्यः शश्वत् पासि।

हिन्दी व्याख्या –हे राजन्, यदि आप में जीवों के ऊपर दया है तो आपके मरने पर केवल यही अकेली गाय जीवित रह सकती है और यदि आप जीते रहेंगे तो निरन्तर पिता के समान विपत्तियों से प्रजा की रक्षा करते रहेंगे।

संस्कृत व्याख्या– तव–भवतः, **भूतानुकम्पा**–प्राणिदया, **चेत्**–यदि, **तर्हि**–तदा, **त्वदन्ते**–तव मृत्यौ (सति), **इयम्**–एषा, **एका**–केवला, **गौः**–धेनुः, **स्वस्तिमती**–कल्याणवती, **भवेत्**–स्यात्, **प्रजानाथ!**–जनाधिपते!, **जीवन्**–श्वसन्, **पुनः**–भूयः, **पिता इव**–जनक इव, **प्रजाः**–जनान्, **उपप्लवेभ्यः**–उत्पातेभ्यः, **शश्वत्**–निरन्तरं, **पासि**–रक्षसि।

संस्कृत भावार्थ– यदि त्वं प्राणिषु दलालुत्वात् अमुं धेनुं रक्षयितुम् स्वदेहदानं कर्तुमुद्यतोऽसि तर्हि तन्नोचितम् यतः तव मरणानन्तरम् केवला इयमेका धेनुः कुशलिनी भविष्यति किन्तु जीवति त्वयि सकलाः प्रजाः क्षेमयुक्ताः भविष्यति।

शब्दार्थ –भूतानुकम्पा – जीवों पर दया। **त्वदन्ते** – तुम्हारे मरने पर। **स्वस्तिमती** – सुरक्षित। **जीवन्**– जीवित रहते हुए। **शश्वत्** – निरन्तर। **उपप्लवेभ्यः** – विपत्तियों से।

● **प्रसङ्ग –** यहाँ भी सिंह गाय के बदले अपना शरीर न देने के लिए राजा को समझा रहा है–

अथैकधेनोरपराधचण्डाद्
गुरोः कृशानुप्रतिमाद्बिभेषि।
शक्योऽस्य मन्युर्भवता विनेतुम्
गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोघ्नीः ॥49॥

अन्वय–अथ एकधेनोः अपराधचण्डात् कृशानुप्रतिमात् गुरोः विभेषि अस्य मन्युः घटोघ्नीः कोटिशः गाः स्पर्शयता भवता विनेतुं शक्यः।

हिन्दी व्याख्या – केवल एक ही गायवाले अपराध होने से अत्यन्त क्रुद्ध हुए अग्नि के तुल्य अपने गुरु वशिष्ठ से यदि आप डरते हैं तो घड़े के समान स्तनवाली करोड़ों गायें उन्हें देकर आप उनके क्रोध को दूर कर सकते हैं।

संस्कृत व्याख्या– अथ–पक्षान्तरे, **एकधेनोः–**एकैव धेनुः गौः यस्य तस्मात्, **अपराधचण्डात्–**अपराधे गवोपेक्षालक्षणे आगसि चण्डात् अतिकोपनात्, **कृशानुप्रतिमात्–**कृशानुः अग्निः प्रतिमा उपमा यस्य तस्मात् गुरोः, **विभेषि–**त्रस्यसि, **अस्य–**गुरोः, **मन्युः–**क्रोधः, **घटोघ्नीः–**कुम्भसदृशापीनाः, **कोटिशः–**असंख्याः, **गाः–**धेनुः, **स्पर्शयता–**ददता, **भवता–**त्वया, **विनेतुं–**अपनेतुं, **शक्यः–**योग्यः।

संस्कृत भावार्थ– हे राजन् ! यदि नन्दिनीनाशरूपापराधेनातिक्रुद्धस्य गुरोः भयं करोषि तर्हि कोटिशः पयस्विनीः गाः दत्त्वा त्वं तस्य क्रोधशान्तिं कर्तुं शक्नोषि।

शब्दार्थ – एकधेनोः - एक ही गाय के जिसके। **अपराधचण्डात्** - अपराध होने पर अति क्रोध करनेवाला। **कृशानुप्रतिमात्** - अग्नि के समान। **विभेषि** - डरते हो। **मन्युः** - क्रोध। **कोटिशः** - करोड़ों। **घटोघ्नीः** - घड़े के समान स्तनवाली अर्थात् खूब दूध देनेवाली। **स्पर्शयता** - देते हुए। **मन्युः विनेतुम् शक्यः** - क्रोध दूर किया जा सकता है। आप अन्य करोड़ो दूध देनेवाली गायें देकर गुरु का क्रोध शान्त कर सकते हैं।

● **प्रसङ्ग –** अन्त में सिंह राजा से कहता है–

तद्रक्ष कल्याणपरम्पराणां
भोक्तारमुर्जस्वलमात्मदेहम् ।
महीतलस्पर्शनमात्रभिन्न-
मृद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः ॥50॥ (2011 HU)

अन्वय–तत् कल्याणपरम्पराणाम् भोक्तारम् ऊर्ज्वस्वलम् आत्मदेहं रक्ष, हि ऋद्धं राज्यम् महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नम् ऐन्द्रम् पदम् आहुः।

हिन्दी व्याख्या – इस कारण हे राजन्, अनेक सुखों के भोग करनेवाले और बलवान् अपने इस शरीर की रक्षा करो, क्योंकि विद्वान् लोग समृद्धिशाली राज्य को केवल पृथ्वी का स्पर्श करने मात्र से भिन्न इन्द्र का पद कहते हैं।

संस्कृत व्याख्या– तत्–तस्मात्, **कल्याणपरम्पराणां–**कल्याणानां मङ्गलानां परम्पराः सन्तानानि तासां, **भोक्तारम्–**अनुभवितारम्, **ऊर्जस्वलम्–**बलवन्तम्, **आत्मदेहं–**स्वशरीरं, **रक्ष–**पालय, **हि–**यतः, **ऋद्धं–**समृद्धं, **राज्यं–**राजकीयप्रभुत्वं, **महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नम्–**भूतलसम्बन्धमात्रेण विसदृशम्, **ऐन्द्रम्–**इन्द्रसम्बन्धि, **पदं–**स्थानम्, **आहुः–**कथयन्ति।

संस्कृत भावार्थ– हे राजन् ! अनेकसुखानाम् भोक्तारम् बलवन्तं स्वदेहं रक्ष, यतः विद्वांसः कथयन्ति यत् समृद्धं राज्यं स्वर्गान्न भिद्यते। अर्थात् तव राज्यं स्वर्गसदृशमस्ति।

शब्दार्थ – कल्याणपरम्पराणाम् - अनेक कल्याणों का। **भोक्तारम्** - भोगनेवाला। **ऊर्जस्वलम्** - बलवान्। **ऋद्धम्** - समृद्धिशाली। **ऐन्द्रं पदम् आहुः** - इन्द्र का पद कहते हैं। **महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नम्** - भूतल के सम्बन्ध मात्र से भिन्न। अर्थात् राजा के समृद्ध राज्य में तथा इन्द्रपद में केवल यही भेद है कि इन्द्रपद स्वर्ग (आकाश) में है और राजा का राज्य पृथ्वी पर है।

● **प्रसङ्ग –** अपनी प्रतिध्वनि द्वारा पर्वत ने भी सिंह के कथन का मानो समर्थन किया–

एतावदुक्त्वा विरते मृगेन्द्रे
प्रतिस्वनेनास्य गुहागतेन।

शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः
प्रीत्या तमेवार्थमभाषतेव॥51॥ (हिन्दी व्याख्या–2019 DE)

अन्वय–मृगेन्द्रे एतावत् उक्त्वा विरते (सति) शिलोच्चयः अपि अस्य गुहागतेन प्रतिस्वनेन उच्चैः क्षितिपालम् प्रीत्या तम् एव अर्थम् अभाषत इव।

हिन्दी व्याख्या – सिंह के इतना कहकर चुप हो जाने पर गुफा में पहुँची हुई उसकी प्रतिध्वनि द्वारा पर्वत भी प्रेम से मानो उसी बात को राजा दिलीप से जोर से कहने लगा।

संस्कृत व्याख्या– मृगेन्द्रे–सिंहे, **एतावत्–**पूर्वोक्तम्, **उक्त्वा–**कथयित्वा, **विरते–** निवृत्ते (सति), **शिलोच्चयः–**पर्वतः अपि, **अस्य–**सिंहस्य, **गुहागतेन–**गह्वरव्याप्तेन, **प्रतिस्वनेन–**प्रतिध्वनिना, **उच्चैः–**तारस्वरेण, **क्षितिपालम्–**भूपालम्, **प्रीत्या–**प्रेम्णा, **तम् एव–**सिंहोक्तमेव, **अर्थम्–**अभिधेयम्, **अभाषत इव–**अकथयत् इव।

संस्कृत भावार्थ– एतावत् उक्त्वा सिंहः विरराम। तस्मिन् काले तस्य वाक्यस्य प्रतिध्वनिः गुहामध्ये बभूव। तदेदानीं प्रतिभाति स्म यत् पर्वतोऽपि उच्चैः प्रेम्णा च तत्प्रतिध्वनिमिषेण सिंहस्यैव कथनं समर्थयति।

शब्दार्थ – एतावत् - इतना। **उक्त्वा** - कहने पर। **मृगेन्द्रे विरते** - सिंह के चुप हो जाने पर। **शिलोच्चयः** - पर्वत। **गुहागतेन** - गुफा में गया हुआ। **प्रतिस्वनेन** - गूँज से। **उच्चैः** - जोर से। यह अव्यय है। **क्षितिपालम्** - राजा से। **तमेव अर्थम् अभाषत इव** -उसी बात को मानो दुहराया। सिंह के शब्द की आवाज गुफा में गूँजने लगी और उस समय ऐसा मालूम पड़ने लगा मानो पर्वत भी वही बात कह रहा है जो सिंह कहता है।

● **प्रसङ्ग –** राजा दिलीप पुनः सिंह को उत्तर देने के लिए प्रस्तुत हुए–

निशम्य देवानुचरस्य वाचं
मनुष्यदेवः पुनरप्युवाच।
धेन्वा तदध्यासितकातराक्ष्या (हिन्दी व्याख्या–2020 ZR, ZT)
निरीक्ष्यमाणः सुतरां दयालुः॥52॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DB, 20 ZP)

अन्वय–देवानुचरस्य वाचम् निशम्य मनुष्यदेवः तदध्यासितकातराक्ष्या धेन्वा निरीक्ष्यमाणः सुतरां दयालुः पुनः उवाच।

हिन्दी अनुवाद –शङ्कर जी के नौकर (सिंह) की वाणी सुनकर मनुष्यों के राजा (दिलीप) जो सिंह के आक्रमण के कारण कातर नेत्रवाली गाय को देखे जा रहे थे तथा जो अत्यन्त दयालु थे, फिर भी बोले।

संस्कृत व्याख्या– देवानुचरस्य–शिवसेवकस्य, **वाचं–**वाणीं, **निशम्य–**श्रुत्वा, **मनुष्यदेवः–**राजा, **तदध्यासितकातराक्ष्या–**तेन सिंहेन यद् अध्यासितम् आक्रमणं तेन कातरे भीते अक्षिणी नेत्रे यस्याः तया, **धेन्वा–**गवा, **निरीक्ष्यमाणः–**अवलोक्यमानः, **सुतरां–**नितरां, **दयालुः–**दयार्द्रः (सन्), **पुनरपि–**भूयोऽपि, **उवाच–**उक्तवान्।

संस्कृत भावार्थ– सिंहस्याक्रमणेन सा धेनुः अत्यन्तं भीता बभूव राजानं कातर-दृष्ट्या अपश्यत् च। राजाऽपि दयार्द्रचित्तः सन् सिंहस्य वचनं श्रुत्वा पुनरपि तमवोचत्।

शब्दार्थ –देवानुचरस्य - शिव जी के अनुचर की। **मनुष्यदेवः** - राजा। **तदध्यासितकातराक्ष्या** - उस (सिंह) के आक्रमण से कातर नेत्रवाली गाय। **निरीक्ष्यमाणः** - देखा जाता हुआ। **सुतराम्** - अत्यन्त। यह अव्यय है।

● **प्रसङ्ग –** राजा दिलीप सिंह से बोले–

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः
क्षत्त्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।
राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः
प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा ॥53॥ (हिन्दी व्याख्या–2011 HW, 19 DD, 20 ZU)
(संस्कृत व्याख्या–2020 ZR)

अन्वय–उदग्रः क्षत्त्रस्य शब्दः क्षतात् त्रायते इति 'व्युत्पत्या' भुवनेषु रूढः किल तद्विपरीतवृत्तेः राज्येन किम् उपक्रोशमलीमसैः वा प्राणैः (किम्)।

हिन्दी अनुवाद – संसार में प्रसिद्ध है कि श्रेष्ठ क्षत्र शब्द का अर्थ है 'क्षत' अर्थात् नाश से बचानेवाला क्षत्रिय कहलाता है।

अतः उस क्षत्र शब्द से विपरीत कर्म करनेवाले (अर्थात् नाश से न बचानेवाले) पुरुष के राज्य और अपकीर्ति से मलिन प्राण ये दोनों व्यर्थ हैं।

संस्कृत व्याख्या– उदग्रः–उन्नतः, **क्षत्त्रस्य**–क्षत्रवर्णस्य, **शब्दः**–वाचकः, **क्षतात्**–नाशात्, **त्रायते**–रक्षति, इति हेतोः, **भुवनेषु**–लोकेषु, **रूढः**–प्रसिद्धः, **किल**–खलु, **तद्विपरीतवृत्तेः**–तस्मात् क्षत्रशब्दात् विपरीता विरुद्धा वृत्तिः व्यापारः यस्य तस्य (जनस्य), राज्येन, **किम्**–न किमपि प्रयोजनमस्तीति भावः, **वा**–अथवा, **उपक्रोशमलीमसैः**–उपक्रोशः लोकनिन्दा तेन मलीमसैः मलिनैः, **प्राणैः**–असुभिः (किम्-न किमपि प्रयोजनमिति भावः)।

संस्कृत भावार्थ– लोके विपत्तिमग्नस्य रक्षक एव यथार्थः क्षत्रियः अतः स्वधर्माचरणरहितस्य तस्य जीवनम् राज्यादिकम् च धिक्कारभाजनतया व्यर्थ भवति। यः नाशात् प्रजाः रक्षितुं न समर्थः तस्य राज्यं व्यर्थम्।

शब्दार्थ – उदग्रः - प्रसिद्ध। **क्षतात्** - नाश से। **त्रायते** - बचाता है। **रूढः** - प्रसिद्ध है। **तद्विपरीतवृत्तेः**- उस शब्द के अर्थ के विपरीत कार्यवाले का अर्थात् जो विपत्तियों से (प्रजा की) रक्षा न कर सके (उसके)। **राज्येन किम्** - राज्य से क्या। **उपक्रोशमलीमसैः** - निन्दा से मैले। निन्दनीय। **प्राणैः किम्** - प्राणों से क्या लाभ। राजा के कहने का मतलब है कि क्षत्रिय वही है जो विपत्तियों से लोगों की रक्षा करे। और यदि मैं विपत्ति से इस गाय की रक्षा नहीं कर सकता तो मेरा जीना व मेरा राज्य दोनों व्यर्थ हैं।

● **प्रसङ्ग –** दिलीप सिंह से कहते हैं कि बिना इस गाय के मुनि का क्रोध शान्त न होगा–

कथं नु शक्योऽनुनयो महर्षे-
र्विश्राणनाच्चान्यपयस्विनीनाम्।
इमामनूनां सुरभेरवेहि
रुद्रौजसा तु प्रहृतं त्वयास्याम् ॥54॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DC)

अन्वय–अन्यपयस्विनीनाम् विश्राणनात् महर्षेः अनुनयः कथम् शक्यः इमाम् सुरभेः अनूनाम् अवेहि अस्यां त्वया रुद्रौजसा प्रहृतम्।

हिन्दी व्याख्या – महर्षि वशिष्ठ के क्रोध की शान्ति दूसरी दूध देनेवाली गायों को देने से किस प्रकार हो सकती है। इसको कामधेनु से कम न समझो। इस पर तुम्हारे द्वारा आक्रमण शङ्कर भगवान् की कृपा से हुआ है।

संस्कृत व्याख्या– अन्यपयस्विनीनाम्–अन्यासाम् इतरासाम् पयस्विनीनां धेनूनां, **विश्राणनात्**–वितरणात्, **महर्षेः**–वशिष्ठस्य, **अनुनयः**–क्रोधापनयः, **कथं नु**–केन प्रकारेण नु, **शक्यः**–कर्तुं योग्यः, **इमां**–गां,, **सुरभेः**–कामधेनोः, **अनूनाम्**–अन्यूनाम्, **अवेहि**–जानीहि, **अस्यां**–गवि, **त्वया**–सिंहेन, **तु, रुद्रौजसा**–शङ्करतेजसा, **प्रहृतम्**–प्रहारः कृतः।

संस्कृत भावार्थ– अन्यासां दोग्ध्रीणाम् गवां प्रदानात् मुनेः क्रोधशान्तिः न भविष्यति यतः इयम् साधारणा धेनुः नास्ति इयम् कामधेनुतुल्या अस्ति। अस्याः परिभवो शिवस्य तेजसा अभवत् न तु तव सामर्थ्येनेति भावः।

शब्दार्थ – अन्यपयस्विनीनाम् - दूसरी दूध देनेवाली गायों के। **विश्राणनात्** - दान देने से। **अनुनयः** - क्रोध की शान्ति। **कथम् शक्यः** - कैसे हो सकती है। **इमाम्** - इस गाय को। **सुरभेः** - कामधेनु से। **अनूनाम्** - कम नहीं। **अवेहि** - जानो। **अस्याम्** - इस पर। **त्वया प्रहृतम्** - तुम्हारे द्वारा किया गया आक्रमण। **रुद्रौजसा** - शङ्कर के प्रताप से। राजा ने यह बात श्लोक नम्बर 49 के उत्तर में कही। जब सिंह ने यह कहा कि करोड़ों अन्य दूध देनेवाली गायों को देकर गुरु का क्रोध शान्त कर सकते हैं तब राजा उत्तर में कह रहा है कि यह मामूली गाय नहीं है। यह कामधेनु से किसी प्रकार कम नहीं है तो गुरु का क्रोध अन्य गायों के देने से कैसे शान्त हो सकता है। यदि कोई यह कहे कि मामूली गाय नहीं है तो सिंह का आक्रमण कैसे हुआ, जिसका उत्तर है कि शङ्कर जी के तेज से यह आक्रमण हुआ न कि सिंह के तेज से।

● **प्रसङ्ग –** राजा दिलीप अपने पूर्व प्रस्तुत प्रस्ताव को दुहराते हुए कहते हैं–

सेयं स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण
न्याय्या मया मोचयितुं भवत्तः।
न पारणा स्याद्विहता तवैवं (हिन्दी व्याख्या– 2019 DC, 20 ZR)
भवेदलुप्तश्च मुनेः क्रियार्थः॥55॥ (संस्कृत व्याख्या– 2020 ZP, ZT)

अन्वय–सा इयं मया स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण भवत्तः मोचयितुं न्याय्या एवं 'सति' तव पारणा विहता न स्याद् मुनेः क्रियाऽर्थः च अलुप्तः भवेत्।

हिन्दी व्याख्या – इसलिए यह उचित है कि इसके बदले में मैं अपना शरीर देकर इसको तुमसे छुड़ाऊँ ऐसा करने से तुम्हारी पारणा भी भङ्ग न होगी और महर्षि वशिष्ठ का होमादि रूप प्रयोजन भी नष्ट न होगा।

संस्कृत व्याख्या– सा–पूर्वोक्ता, **इयम्–**एषा, **मया–**दिलीपेन, **स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण–**स्वस्य देहः निजशरीर तस्य अर्पणं दानं तदेव निष्क्रयः मूल्यं तेन, **भवत्तः–**त्वत्तः, **मोचयितुं–**त्याजयितुं, **न्याय्या–**उचिता, **एवम्–**इत्थं (सति), **तव–**ते, **पारणा–**व्रतान्तभोजनं, **विहता–**नष्टा, **न स्यात्–**न भवेत्, **मुनेः–**वशिष्ठस्य, **क्रियार्थः–**होमादिकं, च, **अलुप्तः–**अनष्टः, **भवेत्–**स्यात्।

संस्कृत भावार्थ– सेयं मया स्वशरीरदानविनिमयेन भवत्तो मोचयितुं योग्या अस्ति। एवं कृते सति तव चिरकालाद् बुभुक्षितस्य व्रतान्तभोजनं नष्टं न भवेत् तथा वशिष्ठस्य होमादिक्रियारूपं प्रयोजनमपि लुप्तं न भविष्यति।

शब्दार्थ –स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण - बदले में अपना शरीर देकर। **भवत्तः** - तुमसे। **मोचयितुम् न्याय्या** - छुड़ाने (बचाने) योग्य है। मुझे उचित है कि अपना शरीर इसके बदले में देकर इस गाय को तुमसे बचाऊँ। **एवं तव पारणा** - इस प्रकार से तुम्हारी पारणा (व्रत के अन्त का भोजन) नष्ट न होगी। **विहता** - नष्ट। **क्रियार्थ** - होमादिक रूपी प्रयोजन। **अलुप्तः स्यात्** - नष्ट न होगा।

● **प्रसङ्ग –** अपने पक्ष के समर्थन में राजा सिंह को ही प्रमाण रूप में प्रस्तुत करता है–

भवानपीदं परवानवैति
महान् हि यत्नस्तव देवदारौ।
स्थातुं नियोक्तुर्नहि शक्यमग्रे
विनाश्य रक्ष्यं स्वयमक्षतेन ॥56॥

अन्वय–परवान् भवान् अपि इदम् अवैति हि देवदारौ तव महान् यत्नः रक्ष्यम् (वस्तु) विनाश्य स्वयम् अक्षतेन (सता) नियोक्तुः अग्रे स्थातुम् नहि शक्यम्।

हिन्दी व्याख्या – पराधीन आप यह जानते हैं, क्योंकि आप भी देवदारु की रक्षा बड़े परिश्रम से करते हैं। रक्षा करने योग्य वस्तु का नाश करके स्वयं कुशलपूर्वक (नौकर) स्वामी के सामने उपस्थित होने में समर्थ नहीं हो सकता (अर्थात् सामने नहीं ठहर सकता)।

संस्कृत व्याख्या– परवान्–पराधीनः, **भवानपि–**त्वमपि, **इदं–**वक्ष्यमाणम्, **अवैति–**जानाति, **हि–**यतः, **देवदारौ–**तन्नामके वृक्षे, **तव–**भवतः, **महान्–**भूयान्, **यत्नः–**आयासः, **रक्ष्यं–**रक्षणीयं (वस्तु), **विनाश्य–**विनाशं गमयित्वा, **स्वयम्–**आत्मना, **अक्षतेन–** व्रणरहितेन, (सता) **नियोक्तुः–**स्वामिनः, **अग्रे–**पुरतः, **स्थातुं–**वस्तुं, **नहि शक्यम्–**न योग्यम्।

संस्कृत भावार्थ– किञ्च निजभर्तुः अधीनस्थो भवानपि जानाति, यतः भवान् इमं देवदारुम् महता यत्नेन रक्षति। रक्षार्थं समर्पितं वस्तु नाशयित्वा स्वयं च स्वस्थशरीरः सन् भृत्यः कथं स्वामिनः सम्मुखे स्वमुखं दर्शयितुं शक्नोति?

शब्दार्थ – परवान् - पराधीन। **अवैति** - जानते हो। **देवदारौ तव महान् यत्नः** - देवदारु में आपका बड़ा परिश्रम है। **रक्ष्यम्** - रक्षा करने योग्य, जो वस्तु रक्षा के लिए सौंपी गयी है। **विनाश्य** - नाश करके। **स्वयम् अक्षतेन** - स्वयं कुशल रहकर। **नियोक्तुः** - स्वामी के। **स्थातुं नहि शक्यम्** - खड़ा नहीं हो सकता। नौकर स्वयं कुशल रहे, चोट न खाये और रक्षा में सौंपी हुई वस्तु को गँवा दे तो वह नौकर मालिक के सामने खड़ा होने की हिम्मत नहीं कर सकता। क्योंकि उसका चोट न खाना इस बात को प्रकट करता है कि नौकर ने उस वस्तु को बचाने का प्रयत्न नहीं किया।

● **प्रसङ्ग –** राजा को अपने यश की चिन्ता अधिक है, शरीर की नहीं–

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं
यशःशरीरे भव मे दयालुः।
एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां
पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु ॥57॥

अन्वय–किमपि अहं तव अहिंस्यः मतः (अस्मि) चेत् (तर्हि त्वं) मे यशःशरीरे दयालुः भव। मद्विधानाम् एकान्तविध्वंसिषु भौतिकेषु पिण्डेषु अनास्था खलु भवति।

हिन्दी व्याख्या – और यदि तुम्हारी समझ में मैं अवध्य हूँ तो तुम मेरे यश रूपी शरीर पर दया करो। क्योंकि हमारे ऐसे लोग अवश्य नष्ट होनेवाले पाँच भूतों से बने हुए शरीर से प्रेम नहीं रखते।

संस्कृत व्याख्या– किमपि–किंवा, **अहं**–दिलीपः, **तव**–ते, **अहिंस्यः**–अवध्यः, **मतः**–अभीष्टः (अस्मि), **चेत्**–यदि, (तर्हि त्वं) **मे**–मम, **यशःशरीरे**–कीर्तिनौ, **दयालुः**–कृपालुः, **भव**–भवेः, **मद्विधानां**–मादृशानां (पुरुषाणाम्), **एकान्तविध्वंसिषु**–अनिवार्यरूपेण विनाशशीलेषु, **भौतिकेषु**–पृथिव्यादिभूतविकारेषु, **पिण्डेषु**–शरीरेषु, **अनास्था**–अनपेक्षा, **खलु**–निश्चयेन, **भवति**–जायते।

संस्कृत भावार्थ– किञ्च यदि अहं केनचित् कारणेन अवध्यः अस्मि तर्हि मे यशःशरीरे दयालुः भूत्वा तदेव त्रायस्व। रक्तमांसास्थिनिर्मितशरीरापेक्षयाऽहं स्वकीर्तिरूपं शरीरं बहुतरमादरणीयम्मन्ये। पञ्चभूतनिर्मितमिदं शरीरमवश्यं नङ्क्ष्यति परन्तु यशः तु चिरकालं स्थास्यति। कीर्तिः यस्य स जीवति।

शब्दार्थ – किमपि - यदि। **अहं तव अहिंस्यः** - (यदि) मैं तुम्हारे द्वारा मारे जाने योग्य नहीं हूँ। **यशःशरीरे** - यशरूपी शरीर में। **दयालुः भव** - दया करो। भाव यह है कि मुझे खाकर मेरे यश की रक्षा करो। **मद्विधानाम्** - मुझ ऐसे लोगों का। **एकान्तविध्वंसिषु** - अवश्य नष्ट होनेवाले शरीर में। **भौतिकेषु** - पाँच पदार्थों का बना हुआ (क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर)। **पिण्डेषु** - शरीर में। **अनास्था** - प्रेम का अभाव। राजा का कहना है कि हम ऐसे लोगों को, जो कीर्ति को ज्यादा पसन्द करते हैं, यह अवश्य नाशवान् पञ्चभूतनिर्मित शरीर प्रिय नहीं है। अतः मुझे खाकर मेरे यश की रक्षा करो।

● **प्रसङ्ग –** दिलीप अपनी प्रार्थना का उपसंहार करते हैं–

सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहु-
वृत्तः स नौ सङ्गतयोर्वनान्ते।
तद्भूतनाथानुग! नार्हसि त्वं
सम्बन्धिनो मे प्रणयं विहन्तुम् ॥58॥

अन्वय–सम्बन्धम् आभाषणपूर्वम् आहुः सः वनान्ते सङ्गतयोः नौ वृत्तः तद् भूतनाथानुग त्वं सम्बन्धिनः मे प्रणयं विहन्तुं न अर्हसि।

हिन्दी व्याख्या – सम्बन्ध तो बातचीत से उत्पन्न हुआ करते हैं (अर्थात् जब बातचीत हो जाय तभी सम्बन्ध हो जाता है) वह तो वन में मिले हुए हम दोनों का हो गया है। इस कारण हे शिव जी के अनुचर! मुझ सम्बन्धी की प्रार्थना को आप अस्वीकार न करें।

संस्कृत व्याख्या– सम्बन्धं–सख्यम्, **आभाषणपूर्वम्**–आभाषण आलापः पूर्वम् अग्रे (कारणं) यस्य तादृशम्, **आहुः**–कथयन्ति, **सः**–सम्बन्धः, **वनान्ते**–काननप्रान्ते, **सङ्गतयोः**–मिलितयोः, **नौ**–आवयोः, **वृत्तः**–जातः, **तत्**–तस्मात्, **भूतनाथानुग**–हे शिवानुचर, **त्वं**–भवान्, **सम्बन्धिनः**–मित्रस्य, **मे**–मम, **प्रणयं**–याच्नां, **विहन्तुं**–नाशयितुं, **न अर्हसि**–न योग्योऽसि।

संस्कृत भावार्थ– यत् परस्परालापजन्यं सख्यं भवति तत् आवयोः कानने मिलितयोः जातम्, अतएव अहम् तव मित्रम् अस्मि। तस्मात्कारणात् मित्रस्य मम प्रार्थना भवता न अस्वीकार्या।

शब्दार्थ – आभाषणपूर्वम् - आपस की बातचीत ही से जो होता है। **सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुः**- कहते हैं कि वार्त्तालाप से ही सम्बन्ध होता है। जब तक बात नहीं होती तब तक मैत्री नहीं होती। **स नौ वनान्ते सङ्गतयाः** - वह (सम्बन्ध) हम दोनों का वन में मिलने से हो गया। **वृत्तः -** हो गया। **भूतनाथानुग** - शङ्कर जी के अनुचर (सम्बोधन)। **मे सम्बन्धिनः** -मुझ सम्बन्धी का। **प्रणयम्** - प्रार्थना को। **विहन्तुम् नार्हसि** - अस्वीकार मत करो। मैं तुम्हारा मित्र हो गया हूँ, अतः मेरी प्रार्थना को अस्वीकार मत करो।

● **प्रसङ्ग –** सिंह ने राजा की प्रार्थना मान ली और राजा ने अपना शरीर उसे समर्पित कर दिया।

तथेति गामुक्तवते दिलीपः
सद्यः प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः।
स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेह-
मुपानयत् पिण्डमिवामिषस्य ॥59॥ (हिन्दी व्याख्या–2019 DE)

अन्वय–तथा इति गाम् उक्तवते हरये सद्यः प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः सः न्यस्तशस्त्रः (सन्) स्वदेहम् आमिषस्य पिण्डम् इव उपानयत्।

हिन्दी व्याख्या –ज्योंही सिंह ने कहा कि 'ऐसा ही हो' त्योंही राजा की भुजा बन्धन-मुक्त हो गयी और उन्होंने शस्त्र को त्यागकर अपने शरीर को मांस के पिण्ड के समान सिंह को अर्पण कर दिया।

संस्कृत व्याख्या–तथा–एवमस्तु, **इति**–इत्थं, **गां**–वाणीम्, **उक्तवते**–कथितवते, **हरये**–सिंहाय, **सद्यः**–तत्क्षणमेव, **प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः**–प्रतिष्टम्भात् प्रतिबन्धात् विमुक्तः विसृष्टः बाहु भुजः यस्य तादृशः, **सः**–दिलीपः, **नयस्तशस्त्रः**–परित्यक्तायुधः (सन्), **स्वदेहं**–निजशरीरम्, **आमिषस्य**–मांसस्य, **पिण्डम् इव**–कवलम् इव, **उपानयत्**–समर्पितवान्।

संस्कृत भावार्थ–यथा भवान् ब्रवीति तथैव भविष्यति इति कथयित्वा प्रार्थनामङ्गीकुर्वते सिंहाय दिलीपः परित्यक्तायुधः सन् निजदेहम् समर्पितवान्।

शब्दार्थ – तथा इति - ऐसा ही हो। **गाम्** - वाणी। **उक्तवते** - कह चुके हुए (सिंह के लिए)। **सद्यः** - तुरन्त। **प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः** - रुकावट से छूट गया है बाहु जिसका वह (दिलीप)। **न्यस्तशस्त्रः** - शस्त्र त्यागकर। **अमिषस्य** - मांस के । **उपानयत्** - समर्पण कर दिया।

● **प्रसङ्ग** –गाय की रक्षा करनेवाले राजा दिलीप के ऊपर विद्याधरों ने पुष्पवर्षा की–

तस्मिन् क्षणे पालयितुः प्रजाना-
मुत्पश्यतः सिंहनिपातमुग्रम्।
अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः
पपात विद्याधरहस्तमुक्ता ॥60॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DF, 20 ZR)
(हिन्दी व्याख्या– 2019 DA, 20 ZQ)

अन्वय–तस्मिन् क्षणे उग्रम् सिंहनिपातम् उत्पश्यतः अवाङ्मुखस्य प्रजानाम् पालयितुः उपरि विद्याधरहस्तमुक्ता पुष्पवृष्टिः पपात।

हिन्दी व्याख्या – उस समय नीचे मुँह करके भयंकर सिंह के आक्रमण की प्रतीक्षा करने लगा। इतने में विद्याधरों द्वारा राजा के ऊपर फूलों की वर्षा की जाने लगी।

संस्कृत व्याख्या– तस्मिन्, क्षणे–काले, **उग्रं**–भयानकं, **सिंहनिपातम्**–सिंहस्य मृगेन्द्रस्य निपातम् आक्रमणम्, **उत्पश्यतः**–उत्प्रेक्षमाणस्य, **अवाङ्मुखस्य**–अधोमुखस्य, **प्रजानां**–जनानां, **पालयितुः**–रक्षकस्य, **उपरि**–उपरिष्टात्, **विद्याधरहस्तमुक्ता**–विद्याधराणां देवयोनिविशेषाणां हस्तैः करैः मुक्ता विसृष्टा, **पुष्पवृष्टिः**–पुष्पाणां कुसुमानां वृष्टिः, **पपात**–अपतत्।

संस्कृत भावार्थ– तदा सिंहाय स्वशरीरं समर्प्य मुखमधः कृत्वा रौद्रं सिंहनिपतनम् मनसि विचारयतः दिलीपस्योपरि विद्याधराः आकाशात् पुष्पवृष्टिम् अकुर्वन्।

शब्दार्थ – तस्मिन् क्षणे - उस समय। (जब राजा ने अपना शरीर अर्पण कर दिया)। **उग्रम्** - भयानक। **सिंहनिपातम्** - सिंह का आक्रमण। **उत्पश्यतः** - प्रतीक्षा करते हुए। जब राजा यह प्रतीक्षा कर रहा था कि अब सिंह मेरे ऊपर आक्रमण करेगा। **अवाङ्मुखस्य** - नीचे मुख किये हुए। **प्रजानाम् पालयितुः** - प्रजाओं के पालन करनेवाले राजा। **विद्याधरहस्तमुक्ता** - विद्याधरों के हाथ से छोड़ी गयी। विद्याधर एक प्रकार की देवताओं की योनि है, जैसे– किन्नर, यक्ष, गन्धर्व आदि। **पुष्पवृष्टिः** - फूलों की वर्षा। **पपात** - हुई (गिरी)। प्राचीन काल में किसी के लोकोत्तर असाधारण कार्य पर देवगण हर्ष से पुष्पवृष्टि करते थे। यहाँ राजा दिलीप का स्वशरीरदान ऐसा ही कार्य हुआ, जिससे विद्याधरों ने उस पर पुष्प-वर्षा की।

● **प्रसङ्ग** –नन्दिनी के कहने से राजा दिलीप उठे–

उत्तिष्ठ वत्सेत्यमृतायमानं
वचो निशम्योत्थितमुत्थितः सन्।
ददर्श राजा जननीमिव स्वां
गामग्रतः प्रस्त्रविणीं न सिंहम् ॥61॥

अन्वय–हे वत्स! उत्तिष्ठ इति अमृतायमानम् उत्थितम् वचः निशम्य उत्थितः सन् राजा अग्रतः प्रस्त्रविणीं गाम् स्वाम् जननीमिव

ददर्श सिंहं न ददर्श।

हिन्दी व्याख्या – 'हे पुत्र! उठो' इस प्रकार का अमृतमय वचन सुनकर राजा उठा, परन्तु अपने सामने माता के समान उस दुधारी गाय को देखा, सिंह को नहीं। (अर्थात् सिंह अदृश्य हो गया था)।

संस्कृत व्याख्या– वत्स–पुत्र !, **उत्तिष्ठ**–उत्थितो भव, **इति**–इत्यम्, **अमृतायमानं**–सुधासमम्, **उत्थितम्**–उत्पन्नं, **वचः**–वचन, **निशम्य**–श्रुत्वा, **उत्थितः**–ऊर्ध्वावस्थितः (सन्), **राजा**–नृपः, **अग्रतः**–पुरतः, **प्रस्रविणीं**–स्रवत्क्षीरां, **गां**–धेनुं, **स्वां**–निजां, **जननीमिव**–मातरमिव, **ददर्श** अवलोकितवान्, **सिंहं**–केसरिणं, **न,** (ददर्श)।

संस्कृत भावार्थ– हे पुत्र ! उत्तिष्ठ इति अमृततुल्यं वचनं निशम्य यावद्दिलीपः उत्थितः सन् पश्यति तावदग्रे स्थितां स्रवत्क्षीरां निजाम् जननीमिव नन्दिनीमेव अपश्यत् न तु सिंहम्।

शब्दार्थ –अमृतायमानम् - अमृत के समान। **उत्थितम्** - पैदा हुआ। **निशम्य** - सुनकर। **उत्थितः सन्** - उठकर (राजा ने)। **प्रस्रविणीम्** - उत्तम दूध देनेवाली को। **स्वाम् जननीमिव** - अपनी माता के तुल्य।

● **प्रसङ्ग –** नन्दिनी सिंह का रहस्य बताती है–

तं विस्मितं धेनुरुवाच साधो
मायां मयोद्भाव्य परीक्षितोऽसि।
ऋषिप्रभावान्मयि नान्तकोऽपि
प्रभुः प्रहर्तुं किमुतान्यहिंस्राः॥62॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 CZ)

अन्वय–विस्मितं तं धेनुः उवाच साधो मया मायाम् उद्भाव्य त्वम् परीक्षितः असि। ऋषिप्रभावात् मयि अन्तकोऽपि प्रहर्तुं न प्रभुः अन्यहिंस्राः किमुत।

हिन्दी व्याख्या – आश्चर्य से युक्त उस राजा से गाय बोली कि हे सज्जन! मैंने माया पैदाकर तुम्हारी परीक्षा ली थी। महर्षि वशिष्ठ जी की कृपा से यमराज भी मेरे ऊपर प्रहार नहीं कर सकता, दूसरे हिंसक पशुओं की बात ही क्या है?

संस्कृत व्याख्या– विस्मितम्–आश्चर्यितं, **तं**–राजानं, **धेनुः**–गौः, **उवाच**–उक्तवती, **साधो**–परकार्यसाधक!, **मया**–नन्दिन्या, **मायां**–निरुपादानिकां प्रतीतिमात्रां सृष्टिम्, **उद्भाव्य**–उत्पाद्य, **त्वं**–दिलीपः, **परीक्षितः**–परीक्षया, असि। **ऋषिप्रभावात्**–वशिष्ठसामर्थ्यात्, मयि, **अन्तकोऽपि**–यमराजोऽपि, **प्रहर्तुं**–प्रहारं कर्तुं, **न प्रभुः**–न समर्थः, **अन्यहिंस्राः**–इतरधातुकाः (व्याघ्रादयः), **किमुत**–तेषां का कथा ते न प्रभव इत्यर्थः।

संस्कृत भावार्थ– इदमद्भुतं वृत्तं दृष्ट्वा राजा आश्चर्यचकितः वभूव। तं विस्मितं दृष्ट्वा नन्दिनी उवाच-वत्स अहम् मायामयं सिंहम् उत्पाद्य तव भक्तेः परीक्षां कृतवती। महर्षिप्रभावात् यमराजोऽपि मामाक्रमितुं न शक्नोति अन्येषां हिंस्रपशूनाम् का शक्तिः।

शब्दार्थ –विस्मितम् - आश्चर्य में पड़े हुए। **मया** - मुझसे। **साधो** - हे परोपकारी। **उद्भाव्य** - पैदाकर। **परीक्षितः असि** - परीक्षित किये गये हो। मैंने माया का सिंह बनाकर इस बात की परीक्षा ली है कि मुझमें तुम्हारी कितनी भक्ति है। **ऋषिप्रभावात्** - मुनि के प्रभाव से। **अन्तकः** - यमराज। **प्रहर्तुं न समर्थः** - प्रहार करने में समर्थ नहीं हो सकता; आक्रमण नहीं कर सकता। **किमुत** - बात ही क्या है। **अन्यहिंस्रा** - दूसरे हिंसक जीव।

● **प्रसङ्ग –** नन्दिनी राजा से वर माँगने को कहती है–

भक्त्या गुरौ मय्यनुकम्पया च
प्रीतास्मि ते पुत्र! वरं वृणीष्व।
न केवलानां पयसां प्रसूति-
मवेहि मां कामदुधां प्रसन्नाम् ॥63॥ (संस्कृत व्याख्या– 2020 ZQ)
(हिन्दी व्याख्या– 2010 CB, 19 CZ, DF)

अन्वय–पुत्र ! गुरौ भक्तया मयि अनुकम्पया च ते प्रीता अस्मि वरं वृणीष्व मां केवलानां पयसाम् प्रसूति न अवेहि प्रसन्नां (मां) कामदुधाम् (अवेहि)।

हिन्दी व्याख्या – हे पुत्र! मेरे ऊपर दया करने से तथा गुरु वशिष्ठ में तुम्हारी भक्ति के कारण मैं प्रसन्न हूँ। वरदान माँगो! मुझे केवल दूध ही देनेवाली न समझो बल्कि प्रसन्न होने पर मुझे अभिलाषाओं को पूरी करनेवाली समझो।

संस्कृत व्याख्या– पुत्र–वत्स !, **गुरौ**–वशिष्ठे, **भक्त्या**–श्रद्धया, **मयि**–नन्दिन्याम्, **अनुकम्पया**–दयया, च, **ते**–तव, **प्रीता**–प्रसन्ना, अस्मि, **वरं**–वरणीयमर्थं, **वृणीष्व**– याचस्व, **मां**–नन्दिनीं, **केवलानाम्**–एकमात्राणां, **पयसां**–दुग्धानाम्, **प्रसूति**–दात्रीं, **न अवेहि**–न जानीहि, **प्रसन्नां**–प्रीतां, **(मां) कामदुधां**–मनोरथपूरयित्रीं कामधेनुम्, अवेहि।

संस्कृत भावार्थ– हे पुत्र ! त्वया गुरौ भक्तिः दर्शिता मयि दया च कृता। अतः तवोपरि अहं प्रसन्ना अस्मि अतः त्वम् वरं याचस्व। अहम् केवलं दुग्धमेव न ददामि अपितु प्रसन्ना सती भक्तानाम् मनोरथानाम् पूर्त्ति कर्तुं शक्नोमि।

शब्दार्थ – गुरौ भक्त्या - गुरु में भक्ति होने के कारण। **मयि अनुकम्पया** - मुझमें दया करने से। **प्रीता अस्मि** - प्रसन्न हूँ। **वृणीष्व** - माँगो। **केवलानां पयसां** - केवल दूध ही देनेवाली। **कामदुधाम्** - मनोरथों को देनेवाली। **प्रसन्नाम्** - प्रसन्न होने पर। मैं लोगों के मनोरथों को भी पूरा कर सकती हूँ। इसलिए हे पुत्र! मुझसे वरदान माँगो।

● **प्रसङ्गः**–राजा नन्दिनी से वर माँगता है–

ततः समानीय स मानितार्थी
हस्तौ स्वहस्तार्जितवीरशब्दः।
वंशस्य कर्तारमनन्तकीर्तिं
सुदक्षिणायां तनयं ययाचे ॥64॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DD)

अन्वय–ततः स्वहस्तार्जितवीरशब्दः मानितार्थी सः हस्तौ समानीय अनन्तकीर्तिं वंशस्य कर्तारं तनयं सुदक्षिणायाम् ययाचे।

हिन्दी व्याख्या – उसके बाद याचकों का मान रखनेवाले और अपने बाहुबल से 'वीर' पदवी को प्राप्त करनेवाले राजा दिलीप ने दोनों हाथों को जोड़कर वंश को चलानेवाले तथा अनन्त कीर्तिवाले पुत्र के 'सुदक्षिणा' में होने की प्रार्थना की। अर्थात् यह वरदान माँगा कि सुदक्षिणा के गर्भ से अनन्तकीर्तिशाली तथा वंश को चलानेवाला एक पुत्र पैदा हो।

संस्कृत व्याख्या– ततः–तदनन्तरम्, **स्वहस्तार्जितवीरशब्दः**–स्वहस्ताभ्यां निजकराभ्याम् अर्जितः प्राप्तः वीरशब्दः वीरेत्यभिधा येन तादृशः, **मानितार्थी**–मानिताः सन्तोषिताः अर्थिनः याचकाः येन तादृशः, **सः**–दिलीपः, **हस्तौ**–करौ, **समानीय**–सन्धाय, **अनन्तकीर्तिं**–स्थिरयशसं, **वंशस्य**–कुलस्य, **कर्तारं**–प्रवर्तयितारम्, **तनयम्**–पुत्रम्, **ययाचे**–अयाचत।

संस्कृत भावार्थ– ततः समानितयाचकः स्वभुजार्जितवीरशब्दः दिलीपः अञ्जलिं बद्ध्वा कुलस्य प्रवर्तयितारम् अनन्तकीर्तिम् पुत्रं सुदक्षिणां ययाचे।

शब्दार्थ –ततः - तब। **स्वहस्तार्जितवीरशब्दः** - अपने हाथों से (पराक्रम से) वीर पदवी को प्राप्त करनेवाला। **मानितार्थी** - याचकों की इच्छाओं को पूरा करनेवाला। **समानीय** - अञ्जलिबद्ध होकर। **अनन्तकीर्तिम्** - अनन्त कीर्तिवाले को। **वंशस्य कर्त्तारम्** - वंश को चलानेवाले। **तनयं सुदक्षिणायां ययाचे** - सुदक्षिणा के गर्भ से पुत्र (होने का वरदान) माँगा। ऐसा पुत्र जो अनन्त यशवाला हो और वंश को चलानेवाला हो।

● **प्रसङ्गः –** नन्दिनी वरदान देकर दूध पीने के लिए राजा से कहती है–

सन्तानकामाय तथेति कामं
राज्ञे प्रतिश्रुत्य पयस्विनी सा।
दुग्ध्वा पयः पत्रपुटे मदीयं
पुत्रोपभुङ्क्ष्वेति तमादिदेश ॥65॥ (हिन्दी व्याख्या– 2020 ZP)

अन्वय–सा पयस्विनी सन्तानकामाय राज्ञे तथा इति कामं प्रतिश्रुत्य ''हे पुत्र ! मदीयं पयः पत्रपुटे दुग्ध्वा उपभुङ्क्ष्व'' इति तम् आदिदेश।

हिन्दी व्याख्या –उस उत्तम दूधवाली गाय ने पुत्र चाहनेवाले उस राजा दिलीप को 'ऐसा ही हो' वरदान देने की प्रतिज्ञा करके यह आज्ञा दी कि ''हे पुत्र, मेरे दूध को दोने में दुहकर पी लो।''

संस्कृत व्याख्या– सा, **पयस्विनी**–प्रशस्तदुग्धवती नन्दिनी, **सन्तानकामाय**–अपत्यार्थिने, **राज्ञे**–दिलीपाय, **तथा इति**–एवमेव भविष्यति इति, **कामं**–वरं, **प्रतिश्रुत्य**–प्रतिज्ञाय, **पुत्र**–वत्स!, **मदीयं**–मामकीनं, **पयः**–दुग्धं, **पत्रपुटे**–पर्णनिर्मिते पात्रे, दुग्ध्वा, **उपभुङ्क्ष्व**–पिब, इति, **तं**–राजानम्, **आदिदेश**–आज्ञापयामास।

संस्कृत भावार्थ– सा नन्दिनी पुत्रकामाय तस्मै दिलीपाय तथास्तु इति प्रतिज्ञाय पुनः इदम् अकथयत् ''हे वत्स! मम दुग्धम्

पर्णपात्रे दुग्ध्वा पिब'' इति भावार्थः।

शब्दार्थ – पयस्विनी - दुधारू गाय। **सन्तानकामाय** - सन्तान की इच्छा रखनेवाले। **तथा इति** - ऐसा ही हो। **कामम्** - वरदान। **प्रतिश्रुत्य** - प्रतिज्ञा करके। **तथेति** - ऐसा ही हो (यह वरदान देने का वचन देकर)। **मदीयं पयः** - मेरा दूध। **पत्रपुटे** - दोने में। **दुग्ध्वा** - दुहकर। **उपभुङ्क्ष्व** - पिओ।

● **प्रसङ्ग –** राजा दिलीप नन्दिनी से निवेदन करते हैं–

वत्सस्य होमार्थविधेश्च शेष-
मृषेरनुज्ञामधिगम्य मातः।
ऊधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुं
षष्ठांशमुर्व्या इव रक्षितायाः॥66॥ (हिन्दी व्याख्या– 2020 ZO)

अन्वय–हे मातः! वत्सस्य होमार्थविधेश्च शेषं तव ऊधस्यं रक्षितायाः उर्व्याः षष्ठांशम् इव ऋषेः अनुज्ञाम् अधिगम्य उपभोक्तुम् इच्छामि।

हिन्दी व्याख्या –हे माता! बछड़े के पी लेने पर तथा होमादिक क्रिया से बचे हुए तेरे दूध को, (अपने द्वारा) रक्षित पृथ्वी के छठवें भाग के समान, ऋषि वशिष्ठ की आज्ञा पाकर पीना चाहता हूँ।

संस्कृत व्याख्या– मातः–जननि !, **वत्सस्य–**तर्णकस्य, **होमार्थविधेश्च–**होमः हवनम् एव अर्थः प्रयोजनं तस्य विधिः अनुष्ठानं तस्य च, **शेषम्–**अवशिष्टं वत्सपीतहोमप्रयुक्ताविशिष्टमित्यर्थः, **तव–**भवत्याः, **ऊधस्यं–**क्षीरं, **रक्षितायाः–**पालितायाः, **उर्व्याः–**पृथिव्याः, **षष्ठांशं–**षण्णां पूरणः षष्ठः स चासौ अंशः भागस्तम्, **इव–**यथा, **ऋषेः–**मुनेः, **अनुज्ञाम्–**आज्ञाम्, **अधिगम्य–**प्राप्य, **उपभोक्तुम्–**पातुम्, **इच्छामि–**वाञ्छामि।

संस्कृत भावार्थ– तदा नृपः कथयति हे मातः! वत्सपानस्य शेषभूतम् अग्निहोमावशिष्टं च तव पयः पृथिव्याः षष्ठभागमिव गुरोराज्ञां प्राप्य पातुमिच्छामि।

शब्दार्थ – वत्सस्य शेषम् - बछड़े के पीने से बचा हुआ। **होमार्थविधेः च शेषम्**- होमादिक अनुष्ठान करने से बचा हुआ। **ऊधस्यम्** - दूध। **उपभोक्तुम्** - पीना। **ऋषेः अनुज्ञाम् अधिगम्य** - मुनि की आज्ञा पाकर। **उर्व्याः** - पृथ्वी के। **रक्षितायाः** - पालन की गयी। **षष्ठांशम्** - छठा भाग। राजा पृथ्वी की रक्षा करता है इसी से वह उपज का छठा भाग कर के रूप में लेता है। इसीलिए दिलीप कहते हैं कि जिस प्रकार राजा पृथ्वी का छठा भाग कर के रूप में लेता है उसी प्रकार बछड़े के पीने से तथा होमादिक कार्य करने से बचे हुए दूध को पीना चाहता हूँ। मैं सब न पीऊँगा और जो भी पीऊँगा वह वशिष्ठ मुनि की आज्ञा से पीऊँगा।

● **प्रसङ्ग –** राजा के निवेदन से नन्दिनी अत्यधिक प्रसन्न होती है–

इत्थं क्षितीशेन वशिष्ठधेनु-
र्विज्ञापिता प्रीततरा बभूव।
तदन्विता हैमवताच्च कुक्षेः
प्रत्याययावाश्रममश्रमेण॥67॥ (संस्कृत व्याख्या–2019 DA)

अन्वय–इत्थं क्षितीशेन विज्ञापिता वशिष्ठधेनुः प्रीततरा बभूव तदन्विता हेमवतात् कुक्षेः अश्रमेण आश्रमम् प्रत्याययौ च।

हिन्दी व्याख्या – इस प्रकार राजा दिलीप से प्रार्थना की जाने पर वशिष्ठ मुनि की गाय अत्यन्त खुश हुई और उस (दिलीप) के साथ हिमालय की गुफा से बिना परिश्रम के (थकावट के बिना) आश्रम लौटी।

संस्कृत व्याख्या– इत्थम्–अनेन प्रकारेण, **क्षितीशेन–**राज्ञा, **विज्ञापिता–**निवेदिता, **वशिष्ठधेनुः–**नन्दिनी, **प्रीततरा–**प्रसन्नतरा, **बभूव–**जाता, **तदन्विता–**तेन राज्ञा अन्विता युक्ता, **हैमवतात्–**हिमालयसम्बन्धिनः, **कुक्षेः–**गुहायाः, **अश्रमेण–**अनायासेन, **आश्रमं–**वशिष्ठाश्रमं, **प्रत्याययौ च–**प्रत्याजगाम च।

संस्कृत भावार्थ– एवं दिलीपेन प्रार्थिता वशिष्ठस्य गौः भृशं सन्तुष्टा बभूव पश्चात्तेन च अनुगम्यमाना नगेन्द्रकन्दरातः सुखेन आश्रमम् आजगामेति भावः।

शब्दार्थ – इत्थं - इस प्रकार से। यह अव्यय है। **क्षितीशेन** - राजा से। **विज्ञापिता** - कही जाने पर। **प्रीततरा** - बहुत प्रसन्न। **तदन्विता** - उसके साथ। **हैमवतात्** - हिमालय की। **कुक्षेः** - गुफा से। **अश्रमेण** - बिना परिश्रम के। **प्रत्याययौ** - लौटी।

● **प्रसङ्ग** –राजा ने गुरु वशिष्ठ तथा रानी सुदक्षिणा से नन्दिनी की प्रसन्नता बतायी–

तस्याः प्रसन्नेन्दुमुखः प्रसादं
गुरुर्नृपाणा गुरवे निवेद्य।
प्रहर्षचिह्नानुमितं प्रियायै
शशंस वाचा पुनरुक्तयेव ॥68॥

अन्वय–प्रसन्नेन्दुमुखः नृपाणां गुरुः प्रहर्षचिह्नानुमितं तस्याः प्रसादं पुनरुक्तया इव वाचा गुरवे निवेद्य पश्चात् प्रियायै शशंस।

हिन्दी व्याख्या– निर्मल चन्द्रमा के समान शुभ्र कान्तिवाले राजाओं के स्वामी दिलीप ने उसकी (नन्दिनी की) प्रसन्नता पहले अपने गुरु से कहकर फिर अपनी स्त्री से कही। (नन्दिनी की वर प्रदान रूपी प्रसन्नता) राजा की प्रसन्नता के द्योतक मुख की लालिमा आदि चिह्नों से ही प्रकट हो रही थी, अतः मानो राजा ने उस बात को गुरु से दुबारा कहा।

संस्कृत व्याख्या– प्रसन्नेन्दुमुखः–निर्मलचन्द्राननः, **नृपाणां**–राज्ञां, **गुरुः**–श्रेष्ठः (दिलीपः), **प्रहर्षचिह्नानुमितं**–प्रहर्षस्य प्रसन्नतायाः चिह्नानि लक्षणानि तैः अनुमितम् ऊहितम्, **तस्याः**–नन्दिन्याः, **प्रसादम्**–अनुग्रहम्, **पुनरुक्तया इव**–पुनःकथितया इव, **वाचा**–वाण्या, **गुरवे**–वशिष्ठाय, **निवेद्य**–विज्ञाप्य, **पश्चात्**–अनन्तरं, **प्रियायै**–सुदक्षिणायै, **शशंस**–कथयामास।

संस्कृत भावार्थ– प्रसन्नचन्द्राननः महीपतीनां गुरुः दिलीपः यदा गुरुसमीपमागतस्तदा वशिष्ठेन मुखरागादिभिः तस्याः धेनोः अनुग्रहो ज्ञातः पश्चात् राजा गुरवे विज्ञाप्य सुदक्षिणायै वृत्त कथितवान्।

शब्दार्थ –प्रसन्नेन्दुमुखः - निर्मल चन्द्रमा की तरह मुखवाला। **नृपाणां गुरुः** - राजाओं का स्वामी अथवा राजाओं में श्रेष्ठ। **प्रहर्षचिह्नानुमितम्** - प्रसन्नता के लक्षणों जैसे मुख की लालिमा, मुख पर मुसकान आदि से जाना गया। **तस्याः प्रसादम्** - उसकी (नन्दिनी की) वर प्रदान रूपी कृपा। **पुनरुक्तया वाचा इव** - मानो दुहराकर कहा हो। **गुरवे निवेद्य** - गुरु से कहकर। **प्रियायै शशंस** - सुदक्षिणा से कहा। राजा के मुँह पर प्रसन्नता के लक्षण थे। गुरु वशिष्ठ तो राजा की मुखाकृति से समझ ही गये थे कि नन्दिनी इन पर प्रसन्न है फिर भी राजा ने शब्दों द्वारा मानो वह बात दुहरायी।

● **प्रसङ्ग** – गुरु वशिष्ठ की आज्ञा से राजा ने नन्दिनी का दूध पिया–

स नन्दिनीस्तन्यमनिन्दितात्मा
सद्वत्सलो वत्सहुतावशेषम्।
पपौ वशिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः
शुभ्रं यशो मूर्त्तमिवातितृष्णः॥69॥

अन्वय–अनिन्दितात्मा सद्वत्सलः स वशिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः अतितृष्णः इव वत्सहुतावशेषं नन्दिनीस्तन्यं मूर्त्तं शुभ्रं यश इव पपौ।

हिन्दी व्याख्या –पवित्र आचरणवाले सज्जनों के प्रेमी राजा दिलीप ने वशिष्ठ की आज्ञा पाकर बछड़े के पीने से तथा अग्निहोत्र से बचे हुए नन्दिनी के दूध को अत्यन्त प्यासे की तरह मूर्तिमान् पवित्र यश के समान पिया।

संस्कृत व्याख्या– अनिन्दितात्मा–अनिन्दितः अगर्हितः आत्मा स्वभावो यस्य तादृशः, **सद्वत्सलः**–सत्सु सज्जनेषु वत्सलः प्रेमवान्, **सः**–दिलीपः, **वशिष्ठेन**–गुरुणा, **कृताभ्यनुज्ञः**–आज्ञप्तः, **अतितृष्णः इव**–अतिशयपिपासितः इव, **वत्सहुतावशेषं**–तर्णकहवनयोरवशिष्ट, **नन्दिनीस्तन्यं**–नन्दिनीदुग्धं, **मूर्त्तं**–सशरीरं, **शुभ्रं**–निर्मलं, **यश इव**–कीर्तिमिव, **पपौ**–पीतवान्।

संस्कृत भावार्थ– पवित्रात्मा साधुवत्सलः नृपः वशिष्ठस्याज्ञामवाप्य वत्सपीतस्य हवनस्य चावशिष्टम् धेनोर्दुग्धं मूर्तिमत् शुभ्रं यश इव पपाविति भावः।

शब्दार्थ – अनिन्दितात्मा - अच्छे स्वभाववाला। **सद्वत्सलः** - सज्जनो से प्रेम करनेवाला। **कृताभ्यनुज्ञः** - जिसको आज्ञा दे दी गयी है। **अतितृष्णः इव** - अत्यन्त प्यासे के समान। **वत्सहुतावशेषम्** - बछड़े के पीने से तथा होम करने से बचा हुआ।। **नन्दिनीस्तन्यं** - नन्दिनी के दूध को। **मूर्त्तम्** - मूर्तिमान्। **शुभ्रम्** - उज्ज्वल। **यशः इव पपौ** - यश के समान पिया। राजा ने अत्यन्त प्यासे के समान उस दूध को पिया मानो साक्षात् उज्ज्वल यश का पान कर रहा हो।

● **प्रसङ्ग** – गो-सेवा व्रत के समाप्त हो जाने पर वशिष्ठ जी ने राजा और रानी को विदा कर दिया–

प्रातर्यथोक्तव्रतपारणान्ते
प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य।

तौ दम्पती स्वां प्रति राजधानीम्
प्रस्थापयामास वशी वशिष्ठः॥70॥ (हिन्दी व्याख्या– 2020 ZU)

अन्वय–वशी वशिष्ठः प्रातः यथोक्तव्रतपारणान्ते प्रास्थानिकं स्वस्त्ययनं प्रयुज्य तौ दम्पती स्वां राजधानीं प्रति प्रस्थापयामास।

हिन्दी व्याख्या –जितेन्द्रिय महर्षि वशिष्ठ ने सवेरे गो-सेवारूप व्रत का पारण कर लेने के बाद प्रस्थानकालोचित स्वस्त्ययन करके उन दोनों स्त्री-पुरुष (सुदक्षिणा और दिलीप) को उनकी राजधानी की ओर भेजा।

संस्कृत व्याख्या– वशी–जितेन्द्रियः, वशिष्ठः, **प्रातः–**प्रभाते, **यथोक्तव्रतपारणान्ते–**यथोक्तस्य व्रतस्य गोसेवारूपस्य अङ्गभूता या पारणा व्रतान्तभोजनादिकं तस्याः अन्ते समाप्तौ, **प्रास्थानिकं–**प्रस्थानकालोचितं, **स्वस्त्ययनं–**शुभावहमाशीर्वादं, **प्रयुज्य–**दत्त्वा, **तौ–**पूर्वोक्तौ, **दम्पती–**जायापती, सुदक्षिणा–दिलीपौ, **स्वां–**निजां, **राजधानीम्–**अयोध्याम्, प्रति, **प्रस्थापयामास–**विसर्जयामास।

संस्कृत भावार्थ– गुरुः प्रातः यथोक्तस्य गोसेवारूपव्रतस्य पारणान्ते यात्रासम्बन्धि कल्याणयुक्तमाशीर्वचनं विधाय स्वां पुरीम् अयोध्यां प्रति प्रस्थापयामास।

शब्दार्थ –वशी - इन्द्रियों को वश में करनेवाला। **यथोक्तव्रतपारणान्ते** - गो-सेवा रूप व्रत की पारणा करके। **प्रास्थानिकम्** - प्रस्थान के समय उचित। **स्वस्त्ययनम्** - शुभ-सूचक आशीर्वाद। **प्रयुज्य** - देकर। **दम्पती** - राजा-रानी। **प्रस्थापयामास** - भेजा। **राजधानीम्**-राजधानी।

● **प्रसङ्ग –**गुरु वशिष्ठ से आशीर्वाद प्राप्त करके राजा ने प्रस्थान किया–

प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताश-
मनन्तरं भर्तुररुन्धतीं च।
धेनुं सवत्सां च नृपः प्रतस्थे
सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः ॥71॥ (संस्कृत व्याख्या– 2020 ZS)

अन्वय–नृपः हुतं हुताशं भर्तुः अनन्तरम् अरुन्धतीं च सवत्सां धेनुं प्रदक्षिणीकृत्य सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः सन् प्रतस्थे।

हिन्दी व्याख्या – राजा ने आहुति दिये हुए अग्नि की, वशिष्ठ की, उसके बाद (वशिष्ठ-पत्नी) अरुन्धती की तथा बछड़े सहित नन्दिनी की प्रदक्षिणा करके अच्छे मङ्गलों से अधिक तेजवान् होकर प्रस्थान किया।

संस्कृत व्याख्या– नृपः–राजा, **हुतं–**तर्पितं, **हुताशम्–**अग्निम्, **भर्तुः–**पत्युः वशिष्ठस्य, **अनन्तरं–**पश्चात्, **अरुन्धतीं–**वशिष्ठभार्यां, **च–**पुनः, **सवत्सां–**वत्सेन सहितां, **धेनुं–**गां नन्दिनीं, **प्रदक्षिणीकृत्य–**परिक्रम्य, **सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः–**सन्मङ्गलानि शुभमङ्गलमयकार्याणि तैः उदग्रतरः उच्चतरः प्रभवः प्रतापः सामर्थ्यं वा यस्य तादृशः (सन्), **प्रतस्थे–**प्रस्थानं कृतवान्।

संस्कृत भावार्थ–नरेन्द्रः तं हुताग्निं वशिष्ठस्य परिक्रमानन्तरम् अरुन्धतीम् मुनिपत्नीं च सवत्सांगां च परिक्रम्य यात्रासम्बन्धिस्वस्तिवाचनमङ्गलाचारैः उदग्रतरप्रतापः निजराजधानीम्प्रति जगाम इति भावार्थः।

शब्दार्थ – हुतम् - जिसका हवन हो गया है। **हुताशम्** - अग्नि को। अर्थात् हवनादिक कार्य करने से तृप्त अग्नि को। **प्रदक्षिणीकृत्य** - प्रदक्षिणा करके। **सवत्साम्** - बछड़े समेत। **सन्मङ्गलोदग्रतरप्रभावः** - अच्छे मङ्गलों से जिसका तेज बढ़ गया है। प्रस्थान करते समय राजा ने जो हवनादि कार्य किया इससे उनका तेज और बढ़ गया।

● **प्रसङ्ग –** राजधानी की ओर वापस लौटते हुए मार्ग में राज-दम्पती के चलने का वर्णन है–

श्रोत्राभिरामध्वनिना रथेन
स धर्मपत्नीसहितः सहिष्णुः।
ययावनुद्घातसुखेन मार्गं
स्वेनेव पूर्णेन मनोरथेन॥72॥ (हिन्दी व्याख्या– 2020 ZS)

अन्वय–धर्मपत्नीसहितः सहिष्णुः सः श्रोत्राभिरामध्वनिना अनुद्घातसुखेन रथेन स्वेन पूर्णेन मनोरथेन इव मार्गं ययौ।

हिन्दी व्याख्या –जब अपनी धर्मपत्नी सुदक्षिणा के साथ (व्रतादि सम्बन्धी दुःखों को) सहन करनेवाले राजा दिलीप कानों को आनन्द देनेवाली ध्वनि से युक्त तथा रास्ते में ऊँचे-नीचे पत्थरों की ठोकर लगने से जिसमें उछाल नहीं होती थी अतएव सुखप्रद रथ पर चढ़कर चले तो ऐसा मालूम होता था मानो वह अपने सफलीभूत मनोरथ पर चढ़कर जा रहे हों।

संस्कृत व्याख्या– धर्मपत्नीसहितः–धर्मपत्न्या सुदक्षिणया सहितः युक्तः, **सहिष्णुः**–सहनशीलः, **सः**–दिलीप, **श्रोत्राभिरामध्वनिना**–श्रोत्रयोः कर्णयोः अभिरामः आनन्दप्रदः ध्वनिः शब्दो यस्य तेन, **अनुद्घातसुखेन**–प्रतिघातरहितसुखदायकेन, **रथेन**–स्यन्दनेन, **स्वेन**–निजेन, **पूर्णेन**–सफलेन, **मनोरथेन**–अभिलाषेण, **इव**–यथा, **मार्गम्**–पन्थानं, **ययौ**–जगाम।

संस्कृत भावार्थ– व्रतादिकष्टसहनशीलः स नृपः सुदक्षिणासहितः श्रवणसुखकरशब्देन पाषाणकण्टकादिप्रतिघात-रहितेनानन्ददायकेन रथेन मार्गमलङ्घयत्। मन्ये असौ पूर्णम् अव्याहतम् मनोरथमारुह्य ययाविति भावः।

शब्दार्थ – धर्मपत्नीसहितः - अपनी स्त्री के साथ। **सहिष्णुः** - सहन करनेवाला, व्रतादिक दुःखों को सहन करनेवाला। **श्रोत्राभिरामध्वनिना** - कानों को सुख देनेवाले शब्द के द्वारा (रथपक्ष में)। मनोरथ के पूरे होने की बात कानों में पड़ी तो वह अत्यन्त आनन्ददायक प्रतीत हुई (मनोरथ पक्ष में)। **अनुद्घातसुखेन** - ठोकरें न लगने के कारण सुखकर। मनोरथ पूर्णरूप से (सन्तान-प्राप्ति रूपी) जो विघ्न था उसके दूर होने के कारण वह सुखदायक था। **स्वेन पूर्णेन मनोरथेन** - अपने पूर्ण हुए मनोरथ पर मानो चढ़कर गये। ऐसा प्रतीत होता था कि रथ पर चढ़कर नहीं गये बल्कि अपने सफलीभूत मनोरथ पर चढ़कर गये।

● **प्रसङ्ग –**प्रजा ने बड़ी उत्सुकता से राजा का दर्शन किया–

तमाहितौत्सुक्यमदर्शनेन
प्रजाः प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम्।
नेत्रैः पपुस्तृप्तिमनाप्नुवद्भि-
र्नवोदयं नाथमिवोषधीनाम्॥73॥

अन्वय–अदर्शनेन आहितौत्सुक्यम् प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम् नवोदयं प्रजाः तृप्तिम् अनाप्नुवद्भिः नेत्रैः ओषधीनां नाथम् इव तं पपुः।

हिन्दी व्याख्या – (बहुत दिनों से) न देखने के कारण प्रजा के लोग राजा को देखने के लिए उत्सुक हो रहे थे, अतः सन्तान-प्राप्ति के लिए व्रत करने के कारण क्षीणकाय उस राजा को नवोदित चन्द्रमा के समान लोगों ने अपने नेत्रों से पी-सा लिया फिर भी उनके नेत्र तृप्त न हुए।

संस्कृत व्याख्या– अदर्शनेन–अनवलोकनेन, **आहितौत्सुक्यम्**–आहितजनितम् औत्सुक्यम् औत्कण्ठ्यं, येन तादृशं, **प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम्**–प्रजार्थं सन्तानार्थं यद् व्रतं गोसेवारूपं तेन कर्शितं कृशीकृतम् अङ्गं शरीरं येन यस्य वा तादृशं, **नवोदयं**–नवीनाविर्भावं, **प्रजाः**–जनाः **तृप्तिं**–सन्तोषम्, **अनाप्नुवद्भिः**–अलममानैः, **नेत्रैः**–नयनैः, **ओषधीनां नाथं**–चन्द्रम्, इव तद्वत्, **तं**–दिलीपं, **पपुः**–अपिबन् ददृशुरित्यर्थः।

संस्कृत भावार्थ–प्रवासहेतुना अनवलोकनेन प्राप्तौत्कण्ठ्यं पुत्रार्थेन व्रतेन क्षीणकायं तं नृपं जनाः पिपासितैः नेत्रैः ओषधीनाम् पतिं चन्द्रम् इव पपुरिति भावः।

शब्दार्थ – अदर्शनेन - न देखने के कारण। राजा बहुत दिनों तक गाय की सेवा के सम्बन्ध में राजधानी से बाहर था, अतः प्रजा ने उसे बहुत दिनों से नहीं देखा था। **आहितौत्सुक्यम्** - जिसने (देखने की) उत्कण्ठा हृदय में पैदा कर दी है। (यह चन्द्रमा और राजा दोनों का विशेषण है)। **प्रजार्थव्रतकर्शिताङ्गम्** - सन्तान के लिए किये गये व्रत के द्वारा जिसने अपने अङ्गों को कृश कर लिया है ऐसे को। (यह भी चन्द्रमा और राजा दोनों का विशेषण है)। राजा पक्ष में इसका अर्थ होगा - सन्तान के वास्ते किये गये व्रत से क्षीण शरीरवाले को। चन्द्रमा के पक्ष में - संसार के कल्याण के लिए चन्द्रमा अपनी कलाओं का दान देवताओं को देता है, अतः वह भी क्षीण हो जाता है। **नवोदयम्** - नवीन उदय-वाले को। यह दोनों का विशेषण है। चन्द्रपक्ष में - नये उदय हुए को। शुक्लपक्ष में जब चन्द्रमा उदय होता है तो उसे बड़ी उत्सुकता से लोग देखते हैं। राजा पक्ष में - जो राजधानी में फिर से लौटकर आया हो। **ओषधीनां नाथम्** - चन्द्रमा को, चन्द्रमा को ओषधियों का पति कहते हैं, क्योंकि उसकी किरण से अमृत वर्षा होती है और उससे पेड़-पौधे जीवित होते हैं। **तृप्तिम्** - सन्तोष। **अनाप्नुवद्भिः** न पाते हुए। यद्यपि वे राजा को बार-बार देखते थे फिर भी वे तृप्त नहीं थे। **पपुः** - पिया, बड़े प्रेम से देखा।

● **प्रसङ्ग –**नागरिक अभिनन्दन के बाद राजा दिलीप ने पुनः राज्य-भार सँभाल लिया–

पुरन्दरश्रीः पुरमुत्पताकं
प्रविश्य पौरैरभिनन्द्यमानः।

भुजे भुजङ्गेन्द्रसमानसारे
भूयः स भूमेर्धुरमाससञ्ज ॥74॥ (संस्कृत व्याख्या– 2020 ZU)

अन्वय–पुरन्दरश्रीः सः पौरैः अभिनन्द्यमानः उत्पताकम् पुरं प्रविश्य भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भुजे भूयः भूमेः धुरम् आससञ्ज।

हिन्दी व्याख्या –इन्द्र के समान कान्तिवाले राजा दिलीप पुरवासियों से अभिनन्दित किये जाते हुए अयोध्या नगर में जहाँ पर पताकाएँ फहरा रही थीं, प्रविष्ट हुए और सर्पराज वासुकि के समान बल धारण करनेवाली अपनीं भुजाओं पर उन्होंने फिर से पृथ्वी का भार धारण किया।

संस्कृत व्याख्या–पुरन्दरश्रीः–इन्द्रशोभः, **सः–**दिलीपः, **पौरैः–**नागरिकैः, **अभिनन्द्यमानः–**प्रशस्यमानः, **उत्पताकम्–**उच्छ्रितध्वजं, **पुरं–**नगरं, **प्रविश्य–**अन्तर्गम्य, **भुजङ्गेन्द्रसमानसारे–**भुजङ्गाः सर्पाः तेषाम् इन्द्रः राजा वासुकिरिति यावत् तेन समानः सदृशः सारः बलं यस्य तस्मिन्, **भुजे–**बाहौ, **भूयः–**पुनः, **भूमेः–**पृथिव्याः, **धुरं–**भारम्, **आससञ्ज–**धारयामास।

संस्कृत भावार्थ–शक्रतुल्यलक्ष्मीकं स राजा प्रजाभिः अभिनन्द्यमानः उच्छ्रितध्वजं पुरं प्रविश्य सर्पराजतुल्यबले भुजे भूमेः भारम् पुनः स्थापितवान् अर्थात् राज्यभारम् अग्रहीत्।

शब्दार्थ –पुरन्दरश्रीः - इन्द्र के समान शोभावाला। **उत्पताकम्** - जहाँ पर पताकाएँ फहरा रही थीं। **अभिनन्द्यमानः** - स्वागत किया जाता हुआ। **पौरैः** - नगरवासियों ने। **पुरं प्रविष्य** - नगर में प्रवेशकर। **भुजङ्गेन्द्रसमानसारे** - सर्पराज के समान बलशाली भुजा पर (में)। **भूमेः धुरम्** - पृथ्वी के भार को। **भूयः आससञ्ज** - फिर से धारण किया। फिर से राज्यभार ग्रहण किया।

● **प्रसङ्ग –**रानी सुदक्षिणा के गर्भ-धारण करने का वर्णन है–

अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः
सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्।
नरपतिकुलभूत्यै गर्भमाधत्त राज्ञी
गुरुभिरभिनिविष्टं लोकपालानुभावैः॥75॥

अन्वय–अथ अत्रेः नयनसमुत्थं ज्योतिः द्यौः इव वह्निनिष्ठ्यूतम् ऐशम् तेजः सुरसरित् इव नरपतिकुलभूत्यै राज्ञी गुरुभिः लोकपालानुभावैः अभिनिविष्टम् गर्भम् आधत्त।

हिन्दी व्याख्या –अत्रिमुनि के नेत्रों से उत्पन्न ज्योति (चन्द्रमा) को आकाश के समान और अग्नि द्वारा त्याग किये रुद्र-तेज को गङ्गा जी के समान लोकपालों के महाप्रताप से परिपूर्ण गर्भ को रानी ने दिलीप के वंश के ऐश्वर्य को बढ़ाने के लिए धारण किया।

संस्कृत व्याख्या– अथ–कियत्कालानन्तरम्, **अत्रेः–**तन्नामकस्य महर्षेः, **नयनसमुत्थं–**नेत्रोत्पन्नं, **ज्योतिः–**तेजः, **द्यौः–**आकाशः, **इव–**यथा, वह्निनिष्ठ्यूतं-वह्निना अग्निना निष्ठ्यूतं निक्षिप्तम्, **ऐशम्–**शैवं, **तेजः–**स्कन्दम्, **सुरसरित् इव–**गङ्गा इव, **नरपतिकुलभूत्यै–**राजकुलसमृद्धयै, **राज्ञी–**सुदक्षिणा, **गुरुभिः–**महद्भिः, **लोकपालानुभावैः–**लोकपालानाम् इन्द्रादिदेवानाम् अनुभावाः तेजांसि तैः, **अभिनिविष्टम्–**अनुप्रविष्टं, **गर्भम्–**भ्रूणम्, **आधत्त–**धृतवती।

संस्कृत भावार्थ–यथा द्यौः अत्रेः मुनेः नेत्रोत्पन्नं सोमं धृतवती यथा गङ्गा हुताशनं प्रक्षिप्तम् स्कन्दस्योत्पादकं शैवं तेजः दधार तथैव सुदक्षिणा दिलीपकुलप्रतिष्ठायै महद्भिरष्टलोकपालानां तेजोभिरनुप्रविष्टं गर्भं धृतवतीति भावार्थः।

शब्दार्थ –अत्रेः - अत्रि मुनि को। **नयनसमुत्थम्** - आँखों से उत्पन्न। **ज्योतिः** - तेज अर्थात् चन्द्रमा। हरिवंश महापुराण में यह कथा है - एक समय अत्रि मुनि ध्यानावस्थित थे। उसी समय उनके नेत्रों से जलबिन्दु गिरे, जिनसे दसों दिशाएँ चमक उठीं। तत्पश्चात् उस जल को दिशाओं ने गर्भ रूप में धारण किया परन्तु वे इसे धारण न कर सकीं और वह बाहर निकलकर आकाश में व्याप्त हो गया। वही अन्त में लोकानन्ददायक चन्द्रमा हो गया। **वह्निनिष्ठ्यूतम्** - आग में फेंका हुआ। **सुरसरित्** - गङ्गा। देवतागण तारकासुर से बड़े पीड़ित हुए और उन्होंने जाकर शङ्कर भगवान् से प्रार्थना की। देवताओं की प्रार्थना सुनकर शङ्कर जी ने अपना तेज अग्नि को दिया। अग्नि ने वह तेज गङ्गा जी को धारण करने के लिए कहा। गङ्गा जी ने उस तेज को धारण किया और उसी से स्कन्द (स्वामिकार्तिकेय) की उत्पत्ति हुई। **नरपतिकुलभूत्यै** - नरपति (राजा दिलीप) के वंश की वृद्धि के लिए। **लोकपालानुभावैः** - लोकपालों के तेज से। **अभिनिविष्टम्** - परिपूर्ण। **आधत्त** - धारण किया।

●●

➨ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. कस्य कीदृशं वचो निशम्य पुरुषाधिराजः आत्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार?
उत्तर– मृगाधिराजस्य प्रगल्भं वचो निशम्य पुरुषाधिराजः आत्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार।

प्रश्न 2. राजा दिलीपः क इव इषुप्रयोगे वितथप्रयत्नः सञ्जातः?
उत्तर– राजा दिलीपो वज्रपाणिः (इन्द्रः) इव इषुप्रयोगे वितथप्रयत्नः सञ्जातः।

प्रश्न 3. सिंहः प्राणभृतामन्तर्गतं सर्वं कस्माद् वेद?
उत्तर– सिंहोऽष्टमूर्तेः शिवस्य किङ्करभावात् प्राणभृतामन्तर्गतं सर्वं वेद।

प्रश्न 4. भगवानष्टमूर्तिः कीदृशोऽस्ति?
उत्तर– भगवानष्टमूर्तिः स्थावरजङ्गमानां सर्गस्थितिप्रत्यवहारहेतुरस्ति।

प्रश्न 5. 'स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं, देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद' इति कस्य कं प्रत्युक्तिः?
उत्तर– 'स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं, देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद' इति दिलीपस्य सिंहं प्रत्युक्तिः।

प्रश्न 6. सिंहो गिरिगह्वराणाम् अन्धकारं कैः शकलानि अकरोत्?
उत्तर– सिंहो गिरिगह्वराणाम् अन्धकारं दंष्ट्रामयूखैः शकलानि अकरोत्।

प्रश्न 7. राजा दिलीपः किं कुर्वन् विचारमूढ़ः प्रतिभाति?
उत्तर– राजा दिलीपोऽल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढ़ः प्रतिभाति।

प्रश्न 8. गुरोर्मन्युः काः स्पर्शयता विनेतुं शक्यः?
उत्तर– गुरोर्मन्युर्घटोघ्नीः कोटिशो गाः स्पर्शयता विनेतुं शक्यः।

प्रश्न 9. विद्वांसः ऋद्धं राज्यं किमाहुः?
उत्तर– विद्वांसः ऋद्धं राज्यं महीतलस्पर्शमात्रभिन्नमैन्द्रं पदमाहुः।

प्रश्न 10. मनुष्यदेवः कया निरीक्ष्यमाणः पुनरप्युवाच?
उत्तर– मनुष्यदेवः तदध्यासितकातराक्ष्या धेन्वा निरीक्ष्यमाणः पुनरप्युवाच।

प्रश्न 11. क्षत्रस्य वाचकः शब्दः कस्मिन्नर्थे रूढः?
उत्तर– क्षत्रस्य वाचकः शब्दः 'य क्षतात् त्रायते स क्षत्रः' रूढः।

प्रश्न 12. सिंहेन नन्दिन्यां केन प्रहृतम्?
उत्तर– सिंहेन नन्दिन्यां रुद्रौजसा प्रहृतम्।

प्रश्न 13. नन्दिनी गौः राज्ञा केन प्रकारेण सिंहात् मोचयितुं न्याय्या?
उत्तर– नन्दिनी गौः राज्ञा स्वदेहार्पणनिष्क्रयेण सिंहात् मोचयितुं न्याय्या।

प्रश्न 14. रक्ष्यं विनाश्य स्वयम् अक्षतेन कस्य अग्रे स्थातुं न हि शक्यम्?
उत्तर– रक्ष्यं विनाश्य स्वयम् अक्षतेन् नियोक्तुः अग्रे स्थातुं न हि शक्यम्।

प्रश्न 15. भौतिकाः पिण्डाः कीदृशाः भवन्ति?
उत्तर– भौतिकाः पिण्डाः एकान्तविध्वंसिनो भवन्ति।

प्रश्न 16. सम्बन्धं किम्पूर्वमाहुः?
उत्तर– सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुः।

प्रश्न 17. वनान्ते सङ्गतयोः कयोः सम्बन्धः संवृत्तः?
उत्तर– वनान्ते सङ्गतयोः सिंह-दिलीपयोः सम्बन्धः संवृत्तः।

प्रश्न 18. राजा स्वदेहं सिंहाय किमिव उपानयत्?
उत्तर– राजा न्यस्तशस्त्रः स्वदेहं सिंहाय आमिषस्य पिण्डमिव उपानयत्।

प्रश्न 19. विद्याधरहस्तमुक्ता पुष्पवृष्टिः कुत्र पपात्?
उत्तर– विद्याधरहस्तमुक्ता पुष्पवृष्टिः अवाङ्मुखस्य दिलीपस्योपरि पपात्।

प्रश्न 20. विस्मितं दिलीपं धेनुः किम् उवाच?
उत्तर– विस्मितं दिलीपं धेनुः 'साधो मायाम् उद्भाव्य मया परीक्षितोऽस्ति' इत्युवाच।

प्रश्न 21. दिलीपः सुदक्षिणायां कीदृशं तनयं ययाचे?
उत्तर– दिलीपः सुदक्षिणायां वंशस्य कर्तारम् अनन्तकीर्तिं तनयं ययाचे।

प्रश्न 22. पयस्विनी दिलीपं किम् आदिदेश?
उत्तर– पयस्विनी दिलीपं 'पुत्र मदीयं पयः पत्रपुटे दुग्ध्वा उपभुङ्क्ष्व' इत्यादिदेश।

प्रश्न 23. राजा दिलीपः नन्दिन्या ऊधस्यं (दुग्धं) कस्य अनुज्ञाम् अधिगम्य उपभोक्तुम् इच्छति?
उत्तर– राजा दिलीपः नन्दिन्या ऊधस्यं (दुग्धं) ऋषेः अनुज्ञाम् अधिगम्य उपभोक्तुम् इच्छति।

प्रश्न 24. नृपाणां गुरुः गुरवे निवेद्य प्रियायै कं शशंस?
उत्तर– नृपाणां गुरुः गुरवे निवेद्य प्रियायै नन्दिन्याः प्रसादं शशंस।

प्रश्न 25. दिलीपः कीदृशं नन्दिनीस्तन्यं पपौ?
उत्तर– दिलीपः वत्सहुतावशेषं शुभ्रं मूर्तं यश इव नन्दिनीस्तन्यं पपौ।

प्रश्न 26. स्कन्दस्य मातुः हेमकुम्भस्तननिःसृतानां पयसां रसज्ञः कः?
उत्तर– स्कन्दस्य मातुः हेमकुम्भस्तननिःसृतानां पयसां रसज्ञो देवदारुरस्ति।

प्रश्न 27. देवदारोः त्वक् केन उन्मथिता?
उत्तर– देवदारोः त्वक् वन्यद्विपेन उन्मथिता।

प्रश्न 28. अद्रेस्तनया कीदृशं सेनान्यमिवैनं देवदारुं शुशोच?
उत्तर– अद्रेस्तनया असुरास्त्रैरालीढं सेनान्यमिवैनं देवदारुं शुशोच।

प्रश्न 29. अद्रिकुक्षौ केन कः किमर्थं व्यापारितः?
उत्तर– अद्रिकुक्षौ शूलभृता सिंहो वनद्विपानां त्रासार्थं व्यापारितः।

प्रश्न 30. नन्दिनी सिंहस्य तृप्त्यै कस्य केवोपस्थिता?
उत्तर– नन्दिनी सिंहस्य तृप्त्यै सुरद्विषः चान्द्रमसी सुधेवोपस्थिता।

➨ बहुविकल्पीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनकर लिखिए–

1. नन्दिनी सेवा कृता–
(i) दिलीपेन (ii) अजेन (iii) दशरथेन (iv) रामेण **उत्तर–** (i) दिलीपेन।

2. कः राजा नन्दिनी सिषेवे? (2020 ZP)
(i) अजः (ii) दिलीपः (iii) रघुः (iv) दशरथः **उत्तर–** (ii) दिलीपः।

3. नन्दिनी कस्य गौः आसीत्? (2019 CZ, 20 ZU)
अथवा **नन्दिनी कस्य धेनुः अस्ति?** (2019 DA, 20 ZO)
(i) दिलीपस्य (ii) रघोः (iii) वशिष्ठस्य (iv) दशरथस्य **उत्तर–** (iii) वशिष्ठस्य।

4. नन्दिनी का आसीत्? (2020 ZP, ZQ)
(i) धेनुः (ii) कामधेनुः (iii) पशुः (iv) देवी **उत्तर–** (ii) कामधेनुः।

5. (कामधेनुः) नन्दिनी कस्य ऋषे धेनुः आसीत्? (2010 CC, 11 HS, HT)
(i) विश्वामित्रस्य (ii) वशिष्ठस्य (iii) दिलीपस्य (iv) कण्वस्य
उत्तर– (ii) वशिष्ठस्य

6. दिलीपस्य पत्न्याः नाम किं आसीत्? (2020 ZR)
(i) मालती (ii) वसुमती (iii) सुदक्षिणा (iv) दमयन्ती
उत्तर– (iii) सुदक्षिणा।

7. ''प्रयुक्तमप्यश्रमितो वृथा स्यात्'' इयं कस्योक्तिः? (2019 CZ)
(i) रघोः (ii) सिंहस्य (iii) दिलीपस्य (iv) दशरथस्य
उत्तर– (ii) सिंहस्य।

8. 'एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वम्' इति कं प्रयुक्तम्?
(i) रघुम् (ii) दिलीपम् (iii) वशिष्ठम् (iv) अजम् **उत्तर–** (ii) दिलीपम्।

9. सौरभेयीं कः जुगोप?
(i) दशरथः (ii) अजः (iii) दिलीपः (iv) रघुः **उत्तर–** (iii) दिलीपः।

10. दिलीपः नन्दिनी सेवायाम् किं तत्परोऽभूत्?
(i) स्वान्तःसुखाय (ii) लोकहिताय (iii) धनार्जनाय (iv) पुत्रलाभाय **उत्तर–** (iv) पुत्रलाभाय।

11. वशिष्ठ धेनोः आराधन तत्परः कः अभूत्?
(i) अजः (ii) रघुः (iii) दशरथः (iv) दिलीपः **उत्तर–** (iv) दिलीपः।

12. दिलीपस्य दयिता का आसीत्? (2020 ZO, ZS)
(i) वसुमती (ii) सुदक्षिणा (iii) सुलक्षणा (iv) सुभद्रा **उत्तर–** (ii) सुदक्षिणा।

13. वशिष्ठः कस्य गुरुः आसीत्? (2020 ZT)
(i) रामस्य (ii) दशरथस्य (iii) लक्ष्मणस्य (iv) सुमन्त्रस्य **उत्तर–** (ii) दशरथस्य।

14. दिलीपः नन्दिन्या सेवायां तत्परोऽभूत्?
(i) स्वान्तःसुखाय (ii) लोकाराधनाय (iii) सन्तानकामाय (iv) गुरोराज्ञानुपालनाय
उत्तर– (iv) गुरोराज्ञानुपालनाय।

15. महाकवि कालिदास का 'रघुवंश क्या है?
(i) नाटक (ii) गद्यकाव्य (iii) महाकाव्य (iv) खण्डकाव्य **उत्तर–** (iii) महाकाव्य।

16. उपमा प्रयोग के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं?
(i) भारवि (ii) श्री हर्ष (iii) कालिदास (iv) दण्डी **उत्तर–** (iii) कालिदास।

17. महाकवि कालिदास की रचनाएँ हैं? (2020 ZR)
(i) छह (ii) तीन (iii) सात (iv) पाँच **उत्तर–** (iii) सात।

18. दिनक्षपामध्यगता का इव धेनुः विरराज?
(i) रात्रिः (ii) सन्ध्या (iii) प्रातः (iv) मध्याह्न। **उत्तर–** (ii) सन्ध्या।

19. किमर्थं दिलीपः नन्दिनीम् सेवत?
(i) राज्याय (ii) धनाय (iii) स्वान्तःसुखाय (iv) सन्तानाय **उत्तर–** (iv) सन्तानाय।

20. द्वाविंशे दिवसे नन्दिनी कुत्र प्रविष्टा? (2010 CB)
(i) गृहे (ii) गुहायाम् (iii) प्रासादे (iv) गोशालायाम्
उत्तर– (ii) गुहायाम्।

21. नन्दिनी का आसीत्?
(i) धेनुः (ii) अजा (iii) महिषी (iv) सेविका
उत्तर– (i) धेनुः।

22. दिलीपः कदा ऋषेः धेनुं वनाय मुमोच? (2020 ZT)
(i) रात्रिकाले (ii) सायंकाले (iii) मध्याह्नकाले (iv) प्रभाते
उत्तर– (iv) प्रभाते।

23. दिलीपस्य परीक्षार्थं नन्दिनी कुत्र प्रविष्टा? (2019 DA)
(i) गृहे (ii) आश्रमे (iii) गिरिगुहायाम् (iv) उपवने
उत्तर– (iii) गिरिगुहायाम्।

24. दिलीपः कस्य आश्रमम् अगच्छत्? (2019 DF)
(i) कण्वस्य (ii) विश्वामित्रस्य (iii) वशिष्ठस्य (iv) अगस्त्यस्य
उत्तर– (iii) वशिष्ठस्य।

25. दिलीपः कस्याः समाराधनतत्परोऽभूत्? (2010 BY, 11 HV, HW)
(i) सुदक्षिणायाः (ii) गुरुपत्न्याः (iii) नन्दिन्याः (iv) पार्वत्याः
उत्तर– (iii) नन्दिन्याः।

26. पयस्विनी कम् आददेश? (2019 DB)
(i) रघुम् (ii) अजम् (iii) दिलीपम् (iv) जनकम्
उत्तर– (iii) दिलीपम्।

27. राजा कां ददर्श? (2019 DB)
(i) नन्दिनीम् (ii) सिंहम् (iii) गोपालकम् (iv) सुदक्षिणाम्
उत्तर– (ii) सिंहम्।

28. प्रतिष्टम्भविमुक्तबाहुः कः? (2019 DC)
(i) रघुः (ii) जनकः (iii) दिलीपः (iv) अजः
उत्तर– (iii) दिलीपः।

29. कान्तवपुः कः? (2019 DC)
(i) रघुः (ii) अजः (iii) दिलीपः (iv) जनकः
उत्तर– (iii) दिलीपः।

30. विचारमूढः कः? (2019 DD, DE, 20 ZQ, ZS)
(i) दिलीपः (ii) रघुः (iii) अजः (iv) जनकः
उत्तर– (i) दिलीपः।

31. दिनावसानोत्सुक बाल वत्सा का? (2019 DD, DE, 20 ZU)
(i) धेनुः (ii) नन्दिनी (iii) कामधेनुः (iv) जननी
उत्तर– (i) धेनुः।

32. इक्ष्वाकुवंशे समुत्पन्नः बभूव– (2019 DF)
(i) दिलीपः (ii) अजः (iii) रघु (iv) सर्वे
उत्तर– (iv) सर्वे।